डाक पंजीकरण संख्या, मेरठ-29-2015-2017, ISSN-0973-9459
प्रकाशन तिथि-10 अगस्त 2016, मूल्य-10/-रु., कुल पृष्ठ-52

स्याद्वाद सूर्य से आलोकित

सम्यग्ज्ञान

Samyakgyan

वर्ष-43 अगस्त-2016 अंक-2

सोलहकारण एवं दशलक्षण पर्व विशेषांक

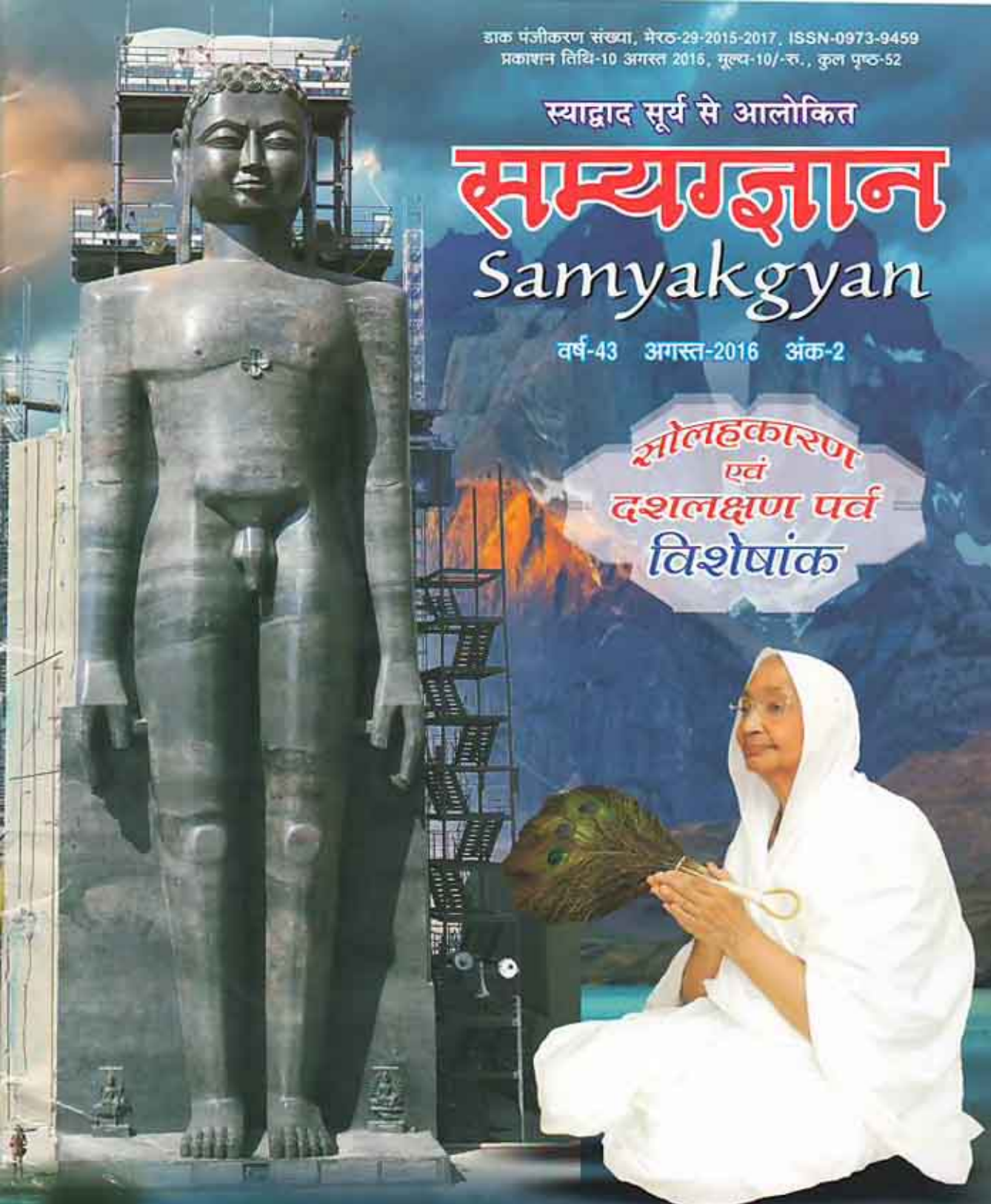

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com Facebook : jaintirthjambudweep
Website : www.jambudweep.org, www.encyclopediaofjainism.com, www.highestjainidolinworld.com

ऋषभगिरि, मांगीतुंगी (नासिक) महा. में चातुर्मास में 26 पिच्छीधारी साधु-साध्वियाँ साधनारत

सप्तम पट्टाचार्य श्री अनेकांतसागर जी महाराज

ऐलाचार्य श्री निजानंदसागर जी महाराज

मुनि श्री अनुपमस्वामीजी महाराज

मुनि श्री अनंतसागरजी महाराज

गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी

आर्यिका श्री सुभूषणमती माताजी

आर्यिका श्री सुदर्शनमती माताजी

आर्यिका श्री सुदृष्टिमती माताजी

आर्यिका श्री अमृतमती माताजी

संस्थापिका एवं शुभाशीर्वाद : वी.नि.सं. 2542, वि.सं. 2073 ISSN 0973-9459

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

Founder & Auspicious Blessings :
Pujya Ganini Pramukh Aryika
SHRI GYANMATI MATAJI

सम्यग्ज्ञान

हिन्दी मासिक

SAMYAKGYAN

MONTHLY MAGAZINE

समायोजन :
प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका
श्री चंदनामती माताजी

Co-ordination :
Pragya Shramni Aryika
SHRI CHANDNAMATI MATAJI

निर्देशक एवं सम्पादक :
स्वस्तिश्री कर्मयोगी पीठाधीश
रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

Director & Editor :
Swastishri Karmayogi Peethadheesh
Ravindrakirti Swami Ji

प्रबंध सम्पादक :
जीवन प्रकाश जैन

Managing Editor :
Jeevan Prakash Jain

सोलहकारण एवं
दशलक्षण पर्व विशेषांक

वर्ष	–43	YEAR	–43
अगस्त	–2016	AUGUST	–2016
अंक	–2	ISSUE	–2

सम्यग्ज्ञान हिन्दी मासिक का सदस्यता शुल्क

वार्षिक सदस्यता शुल्क	200/-रु.
पंचवर्षीय सदस्यता शुल्क	800/-रु.
संरक्षक शुल्क-12 वर्ष के लिए	1500/-रु.
परम संरक्षक शुल्क-25 वर्ष के लिए	5100/-रु.
शिरोमणि संरक्षक आजीवन	11000/-रु.

विषयानुक्रमणिका

क्र.	विषय	पृ. क्र.
1.	सम्पादकीय – सोलहकारण भावना	4
2.	व्रत- सोलहकारण व्रत विधि	7
	मेघमाला व्रत विधि	7
	जिनमुखावलोकन व्रत विधि	9
	श्रुतस्कंध व्रत	10
	श्री चन्दनषष्ठी व्रत कथा	11
	दशलक्षण व्रत	12
	श्री त्रिलोक तीज व्रत	13
	पुष्पांजलि व्रत विधि	14
	श्री आकाश पंचमी व्रत कथा	15
	निर्दोष सप्तमी व्रत का स्वरूप	16
	सुगंधदशमी व्रत	17
	अनन्त चौदश व्रत विधि	19
	रत्नत्रय व्रत विधि	21
3.	दशधर्म महत्त्व	23
4.	Ṇamokar Mahamantra And.....	27
5.	सोलहकारण पूजा	28
6.	Dashlakshan Dharma Pooja	31
7.	दशलक्षण भजन	36
8.	उत्तम क्षमाधर्म-नाटक	39
9.	उत्तम मार्दव धर्म-नाटक	42
10.	उत्तम आर्जव धर्म-मोनो एक्टिंग	46
11.	The Essence of Jain Religion	47
12.	Jainism & Statue of Ahimsa	48

सोलहकारण पर्व भावना

-जीवन प्रकाश जैन (प्रबंध सम्पादक)

प्रिय पाठक बंधुओं! सम्यग्ज्ञान पत्रिका के इस 43वें वर्ष के प्रारंभ में यह ''सोलहकारण पर्व'' का खास अंक आपके हाथों में है। इसके अन्दर भादों मास में आने वाले 32 दिवसीय सोलहकारणपर्व को प्रमुख करके अनेक व्रतों को समाविष्ट किया गया है। इन्हें सूक्ष्मता से पढ़कर आप लोग अपनी रुचि एवं शक्ति के अनुसार व्रतों को ग्रहण करके पूरे पर्व को अपने जीवन में सार्थक करें। स्मरण रहे, कि जो भी व्रत आपको करना है, उसे किसी न किसी गुरु (मुनि-आर्यिका) से ही ग्रहण करें, तभी उसका पूरा फल प्राप्त होता है।

इसके साथ ही भादों मास में आने वाले दशलक्षण पर्व के दिनों में प्रायः दशधर्म के 1-1 धर्म एवं तत्त्वार्थसूत्र की 1-1 अध्याय का विवेचन सुना और गुना जाता है, इसी बात को ध्यान में रखकर प्रस्तुत अंक में धर्मों का विवेचन है एवं तत्त्वार्थसूत्र के दशों अध्याय का सार 1-1 भजन के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है। यहाँ सम्पादकीय के अंदर भी मैंने सोलह भावनाओं का दिग्दर्शन कराया है।

श्रेयोमार्गानभिज्ञानिह भवगहने जाज्ज्वलद्दुःखदाव-
स्कन्धे चंक्रम्यमाणानतिचकितमिमानुद्धरेयं वराकान्।।
इत्यारोहत्परानुग्रहरसविलसद्भावनोपात्तपुण्यप्रक्रा-
न्तैरेव वाक्यैः शिवपथमुचितान् शास्ति योऽर्हन् स नोऽव्यात्[1]।।1।।

अर्थ– इस संसाररूपी भीषण वन में दुःखरूपी दावानल अग्नि अतिशय रूप से जल रही हैं। जिसमें श्रेयोमार्ग – अपने हित के मार्ग से अनभिज्ञ हुए ये बेचारे प्राणी झुलसते हुए अत्यंत भयभीत होकर इधर-उधर भटक रहे हैं। ''मैं इन बेचारों को इससे निकालकर सुख में पहुँचा दूँ''। पर के ऊपर अनुग्रह करने की इस बढ़ती हुई उत्कृष्ट भावना के रस विशेष से तीर्थंकर सदृश पुण्य संचित कर लेने से दिव्यध्वनिमय वचनों के द्वारा जो उसके योग्य मोक्षमार्ग का उपदेश देते हैं वे अर्हंतजिन हम लोगों की रक्षा करें।

'कर्मारातीन् जयतीति जिनः' कर्मरूपी शत्रुओं को जो जीतते हैं वे जिन कहलाते हैं। 'जिनो देवता अस्येति जैनः' और जिनदेव जिसके देवता हैं – उपास्य हैं वे जैन कहलाते हैं। जिनेन्द्र देव के इस जैनशासन में प्रत्येक भव्य प्राणी को परमात्मा बनने का अधिकार दिया गया है। धर्म के नेता अनंत तीर्थंकरों ने अथवा भगवान महावीर स्वामी ने मोक्षमार्ग के दर्शक ऐसा मोक्षमार्ग के नेता बनने के लिए उपाय बतलाया है। इसी से आप इस जैनधर्म की विशालता व उदारता का परिचय प्राप्त कर सकते हैं। इस उपाय में सोलहकारण भावनायें भानी होती हैं और इनके बल पर अपनी प्रवृत्ति सर्वतोमुखी, सर्वकल्याणमयी, सर्व के उपकार को करने वाली बनानी होती है।

''दर्शनविशुद्धिविनयसंपन्नता शीलव्रतेष्वनतिचारोऽ-भीक्ष्णज्ञानोपयोगसंवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैया-वृत्त्यकरण-महदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनभक्तिरावश्यका-परिहाणिर्मार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य''।।24।।

दर्शनविशुद्धि, विनयसंपन्नता, शीलव्रतेष्वननतिचार, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, संवेग, शक्तितस्त्याग, शक्तितस्तप, साधुसमाधि, वैयावृत्यकरण, अर्हंतभक्ति, आचार्यभक्ति, बहुश्रुतभक्ति, प्रवचनभक्ति, आवश्यक अपरिहाणि, मार्गप्रभावना और प्रवचनवत्सलत्व ये सोलहकारण भावनायें तीर्थंकर प्रकृति के आस्रव के लिये हैं अर्थात् इनसे तीर्थंकर प्रकृति का बंध हो जाता है।

इन सोलह भावनाओं में से दर्शनविशुद्धि का होना अत्यंत आवश्यक है। अन्य सभी भावनायें हों अथवा कुछ कम भी हों फिर भी तीर्थंकर प्रकृति का बंध हो सकता है अथवा किन्हीं एक, दो आदि भावनाओं के साथ सभी भावनायें अविनाभावी हैं तथा अपायविचाय धर्मध्यान भी विशेष रूप से तीर्थंकर प्रकृति बंध के लिए कारण माना गया है। क्योंकि यह ध्यान तपो भावना में अंतर्भूत हो जाता है।

तीर्थंकर प्रकृति के बंध करने वाले कर्मभूमिज मनुष्य ही होते हैं। यदि वे सम्यक्त्व के पूर्व तिर्यंचायु या मनुष्यायु का बंध कर चुके हैं तो इसका बंध नहीं कर सकते। कदाचित् नरकायु के बंध जाने पर भी इसका बंध कर सकते हैं। जैसे कि राजा श्रेणिक ने बंध किया है। केवली या श्रुतकेवली के पादमूल में ही यह प्रकृति बंधती है। यथा – 'प्रथमोपशम सम्यक्त्व में या द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में, क्षायिक अथवा क्षायोपशमिक सम्यक्त्व में स्थित हुये जीव असंयत सम्यग्दृष्टि, देशव्रती, महाव्रती अथवा

1. अनगार धर्मामृत।

अप्रमत्तमुनि हों, कर्मभूमिज मनुष्य केवली या श्रुतकेवली के पादमूल में ही तीर्थंकर प्रकृति का बंध प्रारंभ करते हैं।[1] इस तीर्थंकर प्रकृति का उदय तेरहवें गुणस्थान में ही होता है। तब वे अपनी दिव्यदेशना से असंख्य जीवों को मोक्षमार्ग का उपदेश देते हैं।

इन सोलहकारण भावनाओं के नाम तत्त्वार्थसूत्र के आधार से हैं। षट्खण्डागम ग्रंथ में इन भावनाओं के नाम में कुछ अन्तर है।

अतः यहाँ षट्खण्डागम सूत्र ग्रंथ के आधार से भी सोलहकारण भावनाओं के नाम और लक्षण दिये जा रहे हैं।

"दर्शनविशुद्धता, विनयसंपन्नता, शील व्रतों में निरतिचारता, छह आवश्यकों में अपरिहीनता, क्षण लव प्रतिबोधनता, लब्धिसंवेगसंपन्नता, यथाशक्ति तथा तप, साधुओं के लिए प्रासुक परित्यागता, साधुओं की समाधि संधारण, साधुओं की वैयावृत्ययोगयुक्तता, अरहंत भक्ति, बहुश्रुत भक्ति, प्रवचन भक्ति, प्रवचनवत्सलता, प्रवचन प्रभावनता और अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगयुक्तता, इन सोलह कारणों से जीव तीर्थंकर नाम गोत्र कर्म को बांधते हैं।[1]" तीर्थंकर प्रकृति का चूँकि उच्च गोत्र के साथ अविनाभाव पाया जाता है इसीलिए उसे यहाँ 'गोत्र' नाम से कहा गया है।

(1) दर्शनविशुद्धि भावना—दर्शन से यहाँ अभिप्राय सम्यग्दर्शन का है। तीन मूढ़ता, आठ शंकादि दोष, छह अनायतन और आठ मद इन पच्चीस दोषों से रहित निर्मल सम्यग्दर्शन का नाम दर्शनविशुद्धता है।

(2) विनयसम्पन्नता—विनय के तीन भेद हैं—ज्ञान विनय, दर्शन विनय और चारित्र विनय। ज्ञान के विषय में उपयोगयुक्त रहना, उपाध्याय, श्रुत आदि की भक्ति करना ज्ञान विनय है। निर्दोष सम्यक्त्व बनाना दर्शन विनय है। निर्दोष शील-व्रतों को पालते हुए आवश्यकों में दोष न लगाना चारित्र विनय है। इन तीनों विनय की परिपूर्णता ही विनयसम्पन्नता है।

(3) शीलव्रतेष्वनतिचार—हिंसा आदि पाँचों पापों के त्याग को व्रत और उनके रक्षण को शील कहा जाता है। मद्यपान आदि करने एवं कषायादि के त्याग न करने को अतिचार कहते हैं। अतिचारों से रहित शील और व्रतों का पालन करना शीलव्रतेषु अनतिचारता है।

(4) आवश्यकापरिहाणि—समता, स्तव, वंदना, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान और व्युत्सर्ग ये छह आवश्यक हैं। शत्रु-मित्र आदि इष्ट-अनिष्ट विषयों में राग-द्वेष का परित्याग समता है। त्रैकालिक पाँच परमेष्ठियों में भेद न करके "णमो अरिहंताणं, णमो जिणाणं" आदि उच्चारणपूर्वक नमस्कार करना स्तव है। ऋषभ आदि तीर्थंकर, भरत आदि केवली, आचार्य तथा चैत्यालय आदि में भेद करके उनके गुण स्मरणपूर्वक नमस्कार करना वंदना है। चौरासी लाख उत्तर गुणों से सहित महाव्रतों में उत्पन्न हुए मल को धोने का नाम प्रतिक्रमण है। महाव्रतों में मलोत्पादन के कारण जिस प्रकार न होंगे ऐसा मैं करता हूँ ऐसी मन से आलोचना करके चौरासी लाख व्रतों की शुद्धि को ग्रहण करना प्रत्याख्यान है। एकाग्रतापूर्वक ध्येय वस्तु की ओर मन को रोकना व्युत्सर्ग है। इन छह आवश्यकों की अखंडता अर्थात् परिपूर्णता का नाम आवश्यक अपरिहीनता है।

(5) क्षणलवप्रतिबुद्धता—क्षण और लव ये काल विशेष के नाम हैं। सम्यक्त्व व्रतादि को उज्ज्वल करने, मल को धोने अथवा जलाने का नाम प्रतिबोधन है। प्रत्येक क्षण में व लव में होने वाले प्रतिबोध को क्षण लव प्रतिबोधनता कहते हैं।

(6) लब्धिसंवेगसम्पन्नता—रत्नत्रय काल लब्धि है। उसमें हर्ष होना संवेग है। इस लब्धि संवेग की पूर्णता का नाम लब्धि संवेग सम्पन्नता है।

(7) शक्तितस्तप—थाम का अर्थ बल-वीर्य है। अपनी शक्ति के अनुसार बाह्य और अभ्यंतर तप करना यथा नाम तथा तप अर्थात् शक्तितस्तप है।

(8) प्रासुकपरित्यागता—अनंत ज्ञानादि, क्षायिक सम्यक्त्वादि गुणों के साधक साधु हैं। ज्ञान, दर्शन आदि निरवद्य निर्दोष होने से प्रासुक कहलाते हैं। साधुओं के द्वारा दयापूर्वक जो दर्शन, ज्ञान, चारित्रादि का त्याग या दान है वह 'प्रासुक परित्यागता" है। यह कारण गृहस्थों में सम्भव नहीं है क्योंकि उनमें चारित्र का अभाव है। रत्नत्रय का उपदेश भी गृहस्थों में सम्भव नहीं है क्योंकि दृष्टिवाद आदि उपरिम श्रुत का उपदेश देने का उनको अधिकार नहीं है अतएव यह कारण महर्षियों के ही होता है।

(9) समाधिसंधारणता—रत्नत्रय में सम्यक् अवस्थान का नाम समाधि है। उसको सम्यक् प्रकार से धारण या सिद्ध करना समाधि संधारणता है।

(10) वैयावृत्ययोगयुक्तता—रोगादि से व्याकुल साधु के विषय में जो उपचार आदि किया जाय वह वैयावृत्य है। जो जीव सम्यक्त्वादि और अर्हंत भक्ति आदि से वैयावृत्य में प्रवृत्त होता है उससे वैयावृत्ययोगयुक्तता होती है।

(11) अरिहंतभक्ति—जो घातिया कर्म या आठों कर्मों को नष्ट कर चुके हैं, वे अरिहंत हैं। उनके गुण में अनुराग करना, उनके द्वारा उपदिष्ट अनुष्ठान के अनुकूल प्रवृत्ति करना या उक्त अनुष्ठान का स्पर्श करना अरिहंत भक्ति है।

(12) बहुश्रुतभक्ति—द्वादशांग के पारगामी बहुश्रुत होते हैं। उनकी भक्ति करना, उनके द्वारा उपदिष्ट आगम अर्थ के

अनुकूल प्रवृत्ति करना बहुश्रुत भक्ति है।

(13) प्रवचनभक्ति—सिद्धांत या बारह अंगों का नाम प्रवचन है। श्रेष्ठ वचन सर्वज्ञ की दिव्यध्वनि रूप वाणी प्रवचन है। उसकी भक्ति करना प्रवचन भक्ति है।

(14) प्रवचनवत्सलता—सिद्धांत या बारह अंग का नाम प्रवचन है। इसमें होने वाले देशव्रती, महाव्रती और असंयत सम्यग्दृष्टि भी प्रवचन कहे जाते हैं। इनमें जो अनुराग, आकांक्षा अथवा ''ममेदं'' ये मेरे हैं ऐसी बुद्धि होना प्रवचनवत्सलता है।

(15) प्रवचनप्रभावना—आगमार्थ का नाम प्रवचन है। उसकी कीर्ति को विस्तृत करना या वृद्धिंगत करना वह प्रवचन प्रभावना कहलाती है।

(16) अभीक्ष्णज्ञानोपयोगयुक्तता—अभीक्ष्ण-अभीक्ष्ण का अर्थ बहुत बार या बार-बार है। ज्ञानोपयोग से भाव श्रुत अथवा द्रव्य श्रुत लिया जाता है। दोनों प्रकार के श्रुत में बार-बार उपयोग लगाते रहना अभीक्ष्ण-अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग युक्तता है। इन सोलह कारणों के होने पर जीव तीर्थंकर नामकर्म को बाँधते हैं अथवा सम्यग्दर्शन के होने पर शेष कारणों में से एक-दो आदि कारणों के संयोग से तीर्थंकर नाम कर्म बँधता है। ''जिन जीवों के तीर्थंकर नाम-गोत्र का उदय होता है। वे उसके उदय से देव, असुर और मनुष्य लोक के अर्चनीय, पूज्नीय, वंदनीय, नमस्करणीय, नेता, धर्मतीर्थ के कर्ता जिन व केवली होते हैं।''

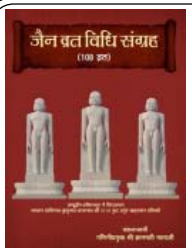

108 व्रत विधियों का विशेष संकलन

''जैन व्रत विधि संग्रह'' पुस्तक अवश्य मंगवाएँ

संकलनकर्त्री-परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी

मूल्य—200/-रुपये विशेष छूट—25 प्रतिशत डाक खर्च अतिरिक्त देय

पूज्य माताजी द्वारा प्रस्तुत ''जैन व्रत विधि संग्रह'' नामक इस पुस्तक में 108 जैन व्रतों का विशेष संकलन किया गया है। इस पुस्तक के माध्यम से आप विभिन्न व्रतों की विधि, जाप्य व कथा की जानकारी प्राप्तकर व्रतों को अपने जीवन में करके धर्माराधना व कर्मनिर्जरा का अद्भुत अवसर प्राप्त कर सकते हैं। कृपया पुस्तक मंगवाकर घर पर या मंदिर जी में रखें अथवा व्रत उद्यापन के समय श्रावकों में वितरित कर ज्ञानदान का अनूठा अवसर प्राप्त करें।

: हमारा पता :

प्रबंधक-वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला, C/o दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

पो.-जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र., संपर्क - मो.-09411025124, फोन नं.-01233-280184

दशलक्षण पर्व में विधान की पुस्तकें मंगवा कर पूजन करें।

धर्मप्रेमी भक्तों! दशलक्षण पर्व में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा पंचमेरु विधान एवं प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी द्वारा रचित सोलहकारण विधान, दशलक्षण विधान, रत्नत्रय विधान करने हेतु जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला से प्रकाशित पुस्तकें मंगाकर धर्मलाभ अर्जित कर सकते हैं।

सोलहकारण विधान	**मूल्य—40/-रुपये**	**विशेष छूट—25 प्रतिशत**	**कुल पृष्ठ—144**
पंचमेरु विधान	**मूल्य—24/-रुपये**	**विशेष छूट—25 प्रतिशत**	**कुल पृष्ठ—72**
दशलक्षण विधान	**मूल्य—40/-रुपये**	**विशेष छूट—25 प्रतिशत**	**कुल पृष्ठ—96**
रत्नत्रय विधान	**मूल्य—20/-रुपये**	**विशेष छूट—25 प्रतिशत**	**कुल पृष्ठ—56**

संपर्क-प्रबंधक-वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.-250404, मो.-9411025124

भाद्रपद मास में किये जाने वाले व्रत एवं विधि

(पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा संकलित ''108 व्रत विधि संग्रह'' नामक ग्रंथ के आधार से)

(1)

सोलह कारण व्रत विधि

भादों वदी एकम् से आश्विन वदी एकम तक, माघ वदी एकम से फाल्गुन वदी एकम् तक और चैत्र वदी 1 से वैशाख वदी 1 तक ऐसे वर्ष में तीन बार एक महीने तक यह व्रत किया जाता है। उत्कृष्ट विधि तो एक महीने के उपवास की है, मध्यम विधि में एक उपवास, एक पारणा के प्रकार से अथवा बेला, तेला आदि करते हुए बहुत से भेद हो जाते हैं। जघन्य विधि में शुद्ध एकाशन करना चाहिये। 'व्रत तिथि निर्णय' पुस्तक में तीनों प्रतिपदा को उपवास करना ऐसा कहा हुआ है। इस व्रत में प्रतिदिन अभिषेक, पूजन और सोलहकारण भावना की जाप्य करना चाहिये। प्रतिदिन सोलह भावनाओं का चिंतवन करना चाहिए। यह व्रत उत्कृष्ट 16 वर्ष, मध्यम 5 या 2 वर्ष और जघन्य 1 वर्ष करना चाहिये। पुनः यथाशक्ति उद्यापन करना चाहिए।

इस व्रत की कथा—राजगृही नगरी में राजा हेमप्रभ के यहाँ महाशर्मा नाम का नौकर था। उसकी पुत्री कालभैरवी अत्यंत कुरूप और कुलक्षणी थी। एक दिन मतिसागर नामक चारणऋद्धिधारी के उपदेश को सुनकर महाशर्मा ने पूछा—भगवन्! मेरी पुत्री कुरूपा क्यों है ? गुरु ने कहा—पूर्व जन्म में यह उज्जैन की अतिशय सुन्दरी राजपुत्री थी। रूप के मद में आकर एक ज्ञानसूर्य नामक दिगम्बर जैन मुनि के ऊपर इसने थूक दिया। राजपुरोहित ने क्रोधित होकर कन्या को फटकारा तथा मुनिराज के शरीर का प्रक्षालन कर उसकी वैय्यावृत्ति की। इससे कन्या ने लज्जित होकर गुरु के पास जाकर पश्चाताप करते हुये अपराध की क्षमा माँगी, पुनः धर्मोपदेश सुनकर यथाशक्ति कुछ धारण किया। इस निमित्त से कुछ पुण्य प्राप्त कर तुम्हारे यहाँ कन्या हुई है। मुनि उपसर्ग के पाप से ही यह कुरूपा हुई है क्योंकि गुरु की आसादना का फल बिना भोगे नहीं छूटता है। यह सब सुनकर उपशांत भाव को प्राप्त हो कन्या ने संसार दुःख से छूटने के लिए मुनिराज से उपाय पूछा। मुनिराज ने सम्यक्त्व, अणुव्रत आदि का उपदेश देकर उसे सोलह कारण का व्रत दिया। कालभैरवी ने विधिवत् व्रत का पालन करके समाधि से मरण करके सोलहवें स्वर्ग में देवपद प्राप्त किया। वहाँ से चयकर विदेह क्षेत्र में गंधर्वनगर में सीमंधर तीर्थंकर हो गया, तीर्थंकर पद को प्राप्त कर असंख्यों भव्य जीवों को संबोधकर निर्वाण पद को प्राप्त कर लिया। इस कथा को पढ़कर सभी स्त्री पुरुषों को सोलहकारण व्रत का अनुष्ठान करना चाहिये। इस व्रत की निम्नलिखित जाप्य हैं उन्हें प्रतिदिन करना चाहिये। कहीं-कहीं एक जाप्य को दो दिन करते हैं अतः भादों वदी एकम से कुंवार वदी दूज तक 32 दिन में ये 16 जाप्य पूरी हो जाती हैं।

1. ॐ ह्रीं अर्हं दर्शनविशुद्धि भावनायै नमः।
2. ॐ ह्रीं अर्हं विनयसम्पन्नता भावनायै नमः।
3. ॐ ह्रीं अर्हं शीलव्रतेष्वनतिचार भावनायै नमः।
4. ॐ ह्रीं अर्हं अभीक्ष्णज्ञानोपयोग भावनायै नमः।
5. ॐ ह्रीं अर्हं संवेग भावनायै नमः।
6. ॐ ह्रीं अर्हं शक्तितस्त्याग भावनायै नमः।
7. ॐ ह्रीं अर्हं शक्तितस्तप भावनायै नमः।
8. ॐ ह्रीं अर्हं साधुसमाधि भावनायै नमः।
9. ॐ ह्रीं अर्हं वैयावृत्यकरण भावनायै नमः।
10. ॐ ह्रीं अर्हं अर्हद्भक्ति भावनायै नमः।
11. ॐ ह्रीं अर्हं आचार्यभक्ति भावनायै नमः।
12. ॐ ह्रीं अर्हं बहुश्रुतभक्ति भावनायै नमः।
13. ॐ ह्रीं अर्हं प्रवचनभक्ति भावनायै नमः।
14. ॐ ह्रीं अर्हं आवश्यकापरिहाणि भावनायै नमः।
15. ॐ ह्रीं अर्हं मार्गप्रभावना भावनायै नमः।
16. ॐ ह्रीं अर्हं प्रवचनवत्सलत्व भावनायै नमः।

(2)

मेघमाला व्रत विधि

मेघमाला व्रत भादों बदी प्रतिपदा से लेकर आश्विन वदी प्रतिपदा तक 31 दिन तक किया जाता है। व्रत के प्रारंभ करने के दिन ही जिनालय के आँगन में सिंहासन स्थापित करें अथवा कलश को संस्कृत कर उसके ऊपर थाल रखकर, थाल में जिनबिम्ब स्थापित कर महाभिषेक और पूजन करे। श्वेत वस्त्र पहने, श्वेत ही चन्दोवा बांधे, मेघधारा के समान 1008 कलशों

से भगवान का अभिषेक करे। पूजापाठ के पश्चात् **'ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठिभ्यो नमः'** इस मंत्र का 108 बार जाप करना चाहिए।

मेघमाला व्रत में सात उपवास कुल किये जाते हैं और 24 दिन एकाशन करना होता है। तीनों प्रतिपदाओं के तीन उपवास, दोनों अष्टमियों के दो उपवास एवं दोनों चतुर्दशियों के दो उपवास इस प्रकार कुल सात उपवास किये जाते हैं। इस व्रत को पाँच वर्ष तक पालन करने के पश्चात् उद्यापन कर दिया जाता है। इस व्रत की समाप्ति प्रतिवर्ष आश्विन कृष्णा प्रतिपदा को होती है। सोलहकारण का व्रत भी प्रतिपदा को समाप्त किया जाता है, परन्तु इतनी विशेषता है कि सोलहकारण का संयम और शील आश्विन कृष्णा प्रतिपदा तक पालन करना पड़ता है तथा पंचमी को ही इस व्रत की पूर्ण समाप्ति समझी जाती है। यद्यपि पूर्ण अभिषेक प्रतिपदा को ही हो जाता है, परन्तु नाममात्र के लिए पंचमी तक संयम का पालन करना पड़ता है।

मेघमाला व्रत कथा—वत्सदेश की कौशाम्बीपुरी में जब राजा भूपाल राज्य करते थे तब वहाँ पर एक वत्सराज नाम का श्रेष्ठी (सेठ) और उसकी पद्मश्री नाम की सेठानी रहती थी। पूर्वकृत अशुभ कर्म के उदय से उस सेठ के घर में दरिद्रता का वास रहा करता था इस पर भी इसके सोलह (16) पुत्र और बारह (12) कन्याएँ थीं।

गरीबी की अवस्था में इतने बालकों का लालन-पालन करना और गृहस्थी का खर्च चलाना कैसा कठिन हो जाता है, इसका अनुभव उन्हीं को होता है जिन्हें कभी ऐसा प्रसंग आया हो या जिन्होंने अपने आसपास रहने वाले दीन दुखियों की ओर कभी अपनी दृष्टि डाली हो। परम स्नेह करने वाले माता-पिता ही ऐसे समय में अपने प्यारे बालकों को अनुचित और कठोर शब्दों में केवल सम्बोधन ही नहीं करने लगते हैं किन्तु उन्हें बिना मूल्य या मूल्य में बेच तक देते हैं।

प्राणों से प्यारी संतान कि जिसके लिए संसार के अनेकानेक मनुष्य लालायित रहते हैं और अनेक यंत्र-मंत्रादि कराया करते हैं। हाय! उस दरिद्रावस्था में वह भी भाररूप हो पड़ती है। वत्सराज सेठ इसी चिंता में चिंतित रहता था।

जब ये बालक क्षुधातुर होकर माता से भोजन मांगते तो माता कठोरता से कह देती-जाओ मरो, लंघन करो, चाहे भीख मांगो तुम्हारे लिए मैं कहाँ से भोजन दे दूँ? यहाँ क्या रखा है जो दे दूँ? सो वे नन्हें बालक झिड़की खाकर जब पिताजी के पास जाते, तब वहाँ से निराशा ही पल्ले पड़ती। हाय, उस समय का करुण क्रन्दन किसके हृदय को विदीर्ण नहीं कर देता है!

एक दिन भाग्योदय से एक चारणऋद्धिधारी मुनि वहाँ आये। उन्हें देखकर वत्सराज सेठ ने भक्तिसहित पड़गाहा और घर में जो रुखा सूखा भोजन शुद्धता से तैयार किया गया था, सो भक्ति सहित मुनिराज को दिया।

मुनिराज उस भक्तिपूर्वक दिये हुए स्वाद सहित भोजन को लेकर वन की ओर चले गये। तत्पश्चात् सेठ भी भोजन करके जहाँ श्री मुनिराज पधारे, वहाँ खोजते-खोजते पहुँचा और भक्तिपूर्वक वंदना करके बैठा। श्री गुरु ने इसे सम्यक्त्वादि धर्म का उपदेश दिया।

पश्चात् सेठ ने पूछा—हे दयानिधि! मेरे दरिद्रता होने का कारण क्या है? और अब यह कैसे दूर हो सकती है?

तब श्री गुरु बोले—हे वत्स, सुनो! कौशल देश की अयोध्या नगरी में देवदत्त नामक सेठ की देवदत्ता नाम की सेठानी रहती थी। वह धन कण और रूप लावण्य से संयुक्त तो थी परन्तु कृपण होने के कारण दान धर्म में धन लगाना तो दूर ही रहे किन्तु उल्टा दूसरे का धन हरण करने को तत्पर रहती थी।

एक दिन कहीं से एक गृहत्यागी ब्रह्मचारी जो अत्यन्त हीन शरीर था, सो भोजन के निमित्त उसके घर आ गये। उसे देख सेठानी ने अनेक दुर्वचन कहकर निकाल दिया। वह कृपणा कहने लगी—अरे जा जा, यहाँ से निकल, यहाँ तो घर के बच्चे भूखों मर रहे हैं, फिर दान कहाँ से करें? जो चाहे सो यहाँ ही चला आता है।

इतने ही में उसका स्वामी सेठ भी आ गया और उसने अपनी स्त्री की हाँ में हाँ मिला दी। निदान कुछेक दिनों में वही हुआ, जैसी मनसा वैसी दशा हो गई। अर्थात् उसका सब धन चला गया और वे यथार्थ में भूखों मरने लगे। अति तीव्र पाप का फल कभी-कभी प्रत्यक्ष ही दिख जाता है।

वे सेठ-सेठानी आर्त ध्यान से मरे सो एक ब्राह्मण के घर महिष (भैंस) के पुत्र (पाडा-पाडी) हुए। सो वहाँ भी भूख प्यास की वेदना से पीड़ित हो पानी पीने के लिए एक सरोवर में घुसे थे कि कीच (कादव) में फंस गये और जब तड़फड़ाकर मरणोन्मुख हो रहे थे, उसी दयालु श्रावक ने आकर उन्हें णमोकार मंत्र सुनाया और मिष्ट शब्दों में सम्बोधन किया।

सो वे पाडा-पाडी वहाँ से मरकर णमोकार मंत्र के प्रभाव से तुम मनुष्य भव को प्राप्त हुए, परन्तु पूर्व संचित पापकर्मों का शेषाँश रह जाने से अब तक दरिद्रता ने तुम्हारा पीछा नहीं

छोड़ा है।

हे वत्स! यह दान न देने और यति आदि महात्माओं से घृणा करने का फल है। इसलिए प्रत्येक गृहस्थ को सदैव यथाशक्ति दान धर्म में अवश्य ही प्रवर्तना चाहिए।

अब तुम सत्यार्थ देव अर्हंत, गुरु निर्ग्रंथ और दयामयी धर्म में श्रद्धान करो और श्रद्धापूर्वक मेघमाला व्रत का पालन करो तो सब प्रकार से इस लोक और परलोक संबंधी सुखों को प्राप्त होंगे।

यह व्रत भादो बदी प्रतिपदा से लेकर आश्विन बदी प्रतिपदा तक प्रति वर्ष एक-एक मास करके पाँच वर्ष तक किया जाता है अर्थात् भादों बदी प्रतिपदा से आसोज बदी प्रतिपदा तक (एक मास) श्री जिनालय के आंगन में (चौक में) सिंहासनादि स्थापन करे और उस पर श्री जिनबिम्ब स्थापन करके महाभिषेक और पूजन नित्य प्रति करे, श्वेत वस्त्र पहिने, श्वेत ही चंदोवा बंधावे, मेघ धारा के समान 1008 कलशों से महाभिषेक करके पश्चात् पूजा करे।

पाँच परमेष्ठी की 108 बार जाप करे पश्चात् संगीतपूर्वक जागरण भजन इत्यादि करे। भूमिशयन व ब्रह्मचर्य व्रत पालन करे। यथाशक्ति चारों प्रकार दान देवे, हिंसादि पंच पापों का त्याग करे तथा एक मास पर्यन्त ब्रह्मचर्यपूर्वक एक भुक्त उपवास, बेला, तेला आदि शक्ति प्रमाण करे। निरन्तर षट्रसीव्रत पाले अर्थात् नित्य एक रस छोड़कर भोजन करे।

इस प्रकार जब पाँच वर्ष पूर्ण हो जावें तब शक्ति प्रमाण भाव सहित उद्यापन करे अर्थात् पाँच जिनबिम्बों की प्रतिष्ठा करावे, पाँच महान ग्रंथ लिखावे, पाँच प्रकार पकवान बनाकर श्रावकों के पाँच घर देवे। पाँच-पाँच घण्टा, झालर, चंदोवा, चमर, छत्र, अछार आदि उपकरण देवे। पाँच श्रावकों (विद्यार्थियों) को भोजन करावे, सरस्वतीभवन बनावे, पाठशाला चलावे इत्यादि और अनेकों प्रभावना बढ़ाने वाले कार्य करे।

इस प्रकार व्रत की विधि सुनकर सेठ-सेठानी ने श्रद्धापूर्वक इस व्रत को पालन किया, सो व्रत के प्रभाव से उनका सब दारिद्र्य दूर हो गया और वे स्त्री-पुरुष सुख से काल व्यतीत करते हुए आयु के अंत में संयासपूर्वक मरण कर दूसरे स्वर्ग में देव हुए।

फिर वहाँ से चयकर वे पोदनपुर में विजयभद्र नाम के राजा और विजयावती नाम की रानी हुई, सो पूर्व पुण्य के प्रभाव से धन, धान्य, पुत्र-पौत्रादि सम्पत्ति के अधिकारी हुए।

आयु के अंतिम भाग (वृद्धावस्था) में दोनों राजा और रानी अपने पुत्र को राज्य का अधिकार देकर आप जैनेश्वरी दीक्षा ले तप करने लगे सो तप के प्रभाव से आयु पूर्णकर राजा तो सर्वार्थसिद्धि विमान में अहमिन्द्र हुआ और रानी भी स्त्रीलिंग छेदकर सोलहवें स्वर्ग में महर्द्धिक देव हुईं वहाँ से चयकर वे दोनों प्राणी मोक्षपद प्राप्त करेंगे।

इस प्रकार मेघमाला व्रत के प्रभाव से देवदत्त और देवदत्ता नाम के कृपण सेठ और सेठानी भी मोक्ष पद पावेंगे सो यदि और नरनारी श्रद्धा सहित यह व्रत पालें तो अवश्य उत्तम फल पावेंगे।

(3)

जिनमुखावलोकन व्रत विधि

किं नाम जिनमुखावलोकनं व्रतम्? को विधिः? जिनमुखदर्शनानन्तरमाहारो यस्मिन् तज्जिनमुखावलोकनं नामैतत् निरवधि व्रतम्। इदं व्रतं भाद्रपदमासे करणीयम्, प्रोषधोपवासानन्तरं पारणा पुनः प्रोषधोपवासः, एवमेव प्रकारेण मासान्तपर्यन्तमिति।

अर्थ—जिनमुखावलोकन व्रत किसे कहते हैं? इसकी विधि क्या है? आचार्य उत्तर देते हैं कि प्रातःकाल जिनेन्द्रमुख देखने के अनन्तर आहार ग्रहण करना जिनमुखावलोकन व्रत है। यह निरवधि व्रत होता है। यह व्रत भाद्रपद मास में किया जाता है। प्रथम प्रोषधोपवास, अनन्तर पारणा, पुनः प्रोषधोपवास पश्चात् पारणा, इसी प्रकार मासान्त तक उपवास और पारणा करते रहना चाहिए।

विवेचन-जिनमुखावलोकन व्रत के संबंध में दो मान्यताएँ प्रचलित हैं। प्रथम मान्यता इसे एक वर्ष पर्यन्त करने की है और दूसरी मान्यता एक मास तक करने की। प्रथम मान्यता के अनुसार यह व्रत भाद्रपद मास से आरंभ होकर श्रावण मास में पूरा होता है और द्वितीय मान्यता के अनुसार भाद्रपद मास की कृष्ण प्रतिपदा से आरंभ होकर इस मास की पूर्णिमा को समाप्त हो जाता है। एक वर्ष तक करने का विधान करने वालों के मत से वर्ष में कुल 36 उपवास और एक मास का विधान मानने वालों के मत से एक मास में 15 उपवास करने चाहिए।

प्रथम मान्यता बतलाती है कि भाद्रपद मास की प्रतिपदा को पहला उपवास करना चाहिए। पश्चात् इस मास में किन्हीं भी दो तिथियों को दो उपवास करने चाहिए। परन्तु इस बात का ध्यान सदा रखना होगा कि प्रत्येक मास में कृष्णपक्ष में दो उपवास और शुक्लपक्ष में एक उपवास करना पड़ता है। इस व्रत के लिए कोई तिथि निर्धारित नहीं की गई है। यह किसी भी तिथि

को सम्पन्न किया जा सकता है। प्रथम मान्यता के अनुसार उपवास के दिन रातभर जागरण करते हुए प्रातःकाल श्री जिनेन्द्र प्रभु के मुख का अवलोकन करना चाहिए। रात को **'ॐ अर्हद्भ्यो नमः'** मंत्र का जाप करना चाहिए। जिन दिनों में उपवास नहीं करना है, उन दिनों में उपर्युक्त मंत्र का एक जाप अवश्य करना चाहिए। उपवास के दिन पंचाणुव्रतों का पालन करना, विशेष रूप से ब्रह्मचर्य धारण करना तथा पूजन-सामायिक करना आवश्यक है। जिस समय जिनमुखावलोकन किया जाता है, उस समय व्रत करने वाला भगवान के समक्ष दोनों घुटने पृथ्वी पर टेककर घुटनों के बल बैठ जाता है अथवा सुखासन लगाकर बैठता है। व्रती को भगवान के समक्ष बैठते हुए निम्न मंत्रों का उच्चारण करना चाहिए।

'ॐ त्रैलोक्यवशंकराय केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीअर्हत्परमेष्ठिने नमः। 'ॐ संसारपरिभ्रमणविनाशनाय अभीष्टफलप्रदानाय धरणेन्द्रफणामण्डलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथस्वामिने नमः। 'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उ सा नमः सर्वसिद्धिं कुरु कुरु स्वाहा।' इन तीनों मंत्रों का उच्चारण करते हुए अंतिम मंत्र का 108 बार जाप करना चाहिए। प्रोषधोपवास के दिन भी अंतिम मंत्र का तीनों संध्याओं में जाप करना चाहिए। उपवास के दूसरे दिन पारणा करते समय भोज्य वस्तुओं की संख्या निर्धारित कर लेनी चाहिए।

दूसरी मान्यता के अनुसार भी उपवास के दिन **'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उ सा नमः सर्वसिद्धिं कुरु कुरु स्वाहा।'** इस मंत्र का तीनों संध्याओं में जाप करना चाहिए। अन्य दिनों में दिन में एक बार इस मंत्र का जाप किया जाता है। जिनेन्द्र भगवान के दर्शन के अनन्तर अन्य कार्यों का प्रारंभ करना चाहिए। जिनमुखावलोकन व्रत निरवधि कहलाता है क्योंकि दोनों ही मान्यताओं में इस व्रत के लिए कोई तिथि निश्चित नहीं की गई है। आचार्य ने यहाँ पर दूसरी मान्यता को प्रधानता दी है।

(4)

श्रुतस्कंध व्रत

विधि– भादों मास में भादों कृष्णा प्रतिपदा से लेकर आश्विन कृष्णा प्रतिपदा तक यह व्रत किया जाता है। इसमें एक महिने में उत्कृष्ट 16 उपवास, मध्यम 10 और जघन्य 8 उपवास करें। पारणा के दिन यथाशक्ति नीरस या एक- दो आदि रस छोड़कर एक बार भोजन (एकाशन) करें। 16 उपवास करने में प्रतिपदा से एक उपवास, एक पारणा ऐसे आश्विन कृ. प्रतिपदा तक 16 उपवास होंगे। ऐसे ही 10 उपवास में कृष्णपक्ष में दूज, पंचमी, अष्टमी, दशमी और चौदश तथा शुक्लपक्ष में भी 2,5,8,10 और 14 को उपवास करें। 8 उपवास में भी दो पंचमी, 2 अष्टमी, 2 दशमी और 2 चौदस ऐसे 8 उपवास करें। अथवा शक्ति अनुसार जैसे भी हो, वैसे ये उपवास करें।

प्रतिदिन जिनमंदिर में श्रुतस्कंध मंडल बनाकर श्रुतस्कंध विधान पूजन करें। इस व्रत में प्रतिदिन निम्नमंत्र का जाप्य करें–

''ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांग-श्रुतज्ञानेभ्यो नमः।''

यह व्रत बारह वर्ष तक करें अथवा पांच वर्ष करें। व्रत पूर्ण कर उद्यापन करें। मंदिर में 12-12 उपकरण – घंटा, पूजा के बर्तन, छत्र, चंवर, चंदोवा, चौकी, वेष्टन आदि भेंट करें। शास्त्र छपाकर मंदिर में रखें और मुनि-आर्यिकाओं को तथा श्रावकों को भी शास्त्र भेंट करें। सरस्वती भवन का निर्माण कर श्रुतदेवी की प्रतिमा या श्रुतस्कंध यंत्र स्थापित करें। जिनवाणी के उपदेश आदि द्वारा जैनधर्म की प्रभावना करें। इस प्रकार इस व्रत के प्रभाव से भव्यों को श्रुतज्ञान की वृद्धि होती है और अगले भव में श्रुतकेवली होकर वे परंपरा से केवलज्ञान की प्राप्ति कर लेते हैं।

व्रत की कथा – जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र के आर्यखंड में अंग देश में पटना नगर है। उस नगर के राजा चंद्ररुचि की चन्द्रप्रभा रानी के श्रुतशालिनी नाम की एक कन्या थी। इसे आर्यिका जिनमती के पास विद्याध्ययन के लिए रखा गया। थोड़े ही दिनों में वह कन्या सर्वविद्या में निपुण हो गई। एक दिन श्रुतशालिनी ने एक चौकी पर श्रुतस्कंध मंडल बनाया। इसे देखकर आर्यिका जिनमती ने प्रसन्न होकर कन्या को विद्या में निष्णात समझकर राजा के यहाँ वापस भेज दिया।

एक दिन उद्यान में पधारे वर्द्धमान मुनिराज की वंदना करके राजा ने पूछा – भगवन्! मेरी कन्या को इतने गुण और सुंदर रूप किस पुण्य से मिले हैं? मुनिराज ने कहा – राजन्! इसी जंबूद्वीप के पूर्वविदेह में पुष्कलावती देश में पुण्डरीकिणी नगरी है। वहाँ के राजा गुणभद्र और रानी गुणवती दोनों एक समय सपरिवार श्री सीमंधर भगवान की वंदना को गये। यथायोग्य भक्ति, पूजा करके मनुष्य के कोठे में बैठ गये। पुनः दिव्य उपदेश सुनने के बाद श्रुतस्कंधव्रत का स्वरूप पूछा – तब गणधर देव ने कहा – जिनेन्द्रदेव की दिव्यध्वनि निरक्षरी वाणी है, यह अनंत भव्यों के हितार्थ होती है। भगवान की दिव्यध्वनि को वहाँ पर बैठे सभी भव्य अपनी-अपनी भाषा में समझ लेते हैं। भगवान की वाणी सात सौ अठारह भाषा में खिरती है। इसे सुनकर चार

ज्ञान के धारी गणधरदेव द्वादशांगरूप में गूंथ लेते हैं।

द्वादशांग के नाम—1. आचारांग 2. सूत्रकृतांग 3. स्थानांग 4. समवायांग 5. व्याख्याप्रज्ञप्ति 6. ज्ञातृकथांग 7. उपासकाध्ययनांग 8. अंतकृत्दशांग 9. अनुत्तरौपपादिकदशांग 10. प्रश्नव्याकरणांग 11. सूत्रविपाकांग और 12. दृष्टिवादांग।

फिर इन्हीं के आधार से अनेक मुनिगण ग्रंथ रचना करते हैं। यह जिनेन्द्रवाणी समस्त लोक-अलोक के स्वरूप को और त्रिकालवर्ती पदार्थों को प्रदर्शित करने वाली है। समस्त प्राणियों का हित करने वाली है, मिथ्यामतों को दूरकर पूर्वापर विरोधी दोषों से रहित सच्चे धर्म का उपदेश देने वाली है।

अनेक प्रकार से उपदेश देकर श्रीगणधरदेव ने उन्हें श्रुतस्कंध व्रत की विधि बतलाई। राजा गुणभद्र और रानी गुणवती ने इस व्रत को वहीं समवसरण में गणधर गुरु से ग्रहण किया। पुनः विधिवत् इस व्रत को करके अंत में समाधिपूर्वक मरण कर अच्युत स्वर्ग में इन्द्र-इन्द्राणी हुए।

वहाँ से चयकर वह गुणवती रानी का जीव यहाँ तुम्हारी श्रुतशालिनी नाम की कन्या हुई है। इस प्रकार गुरुमुख से अपने भवांतर सुनकर उस कन्या ने पुनः श्रुतस्कंध व्रत धारण किया। पश्चात् चारित्र के प्रभाव से अंत में समाधिमरण कर स्त्रीलिंग छेदकर इन्द्रपद प्राप्त कर लिया।

कालांतर में इस श्रुतशालिनी के जीव पश्चिम विदेह के कुमुदवती देश के अशोक नगर में राजा पद्मनाभ की रानी जितपद्मा के "नयंधर" नाम के तीर्थंकर हुए हैं। ये कामदेव और चक्रवर्ती भी हुए हैं। नयंधर तीर्थंकर जैनेश्वरी दीक्षा लेकर शुक्लध्यान के द्वारा कर्मों को नष्ट कर केवली हो गये, तब देवों ने समवसरण की रचना कर दी। इन्होंने अनेक देशों में विहार कर भव्यजीवों को धर्मामृत से तर्पित कर अंत में अघातिकर्मों का नाश करके मोक्षपद प्राप्त कर लिया है। इस प्रकार जो नर-नारी भावसहित इस व्रत का पालन करेंगे, वे अवश्य ही श्रुतज्ञान को पूर्ण कर केवलज्ञान को प्राप्त करेंगे।

(5)

श्री चन्दनषष्ठी व्रत कथा

देव नमूँ अरहन्त नित, वीतराग विज्ञान।
चन्दनषष्ठी व्रत कथा, कहूँ स्वपर हित जान।।

काशी देश में बनारस नाम का प्रसिद्ध नगर है। जिसको तेइसवें तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ भगवान ने अपने जन्म धारण करने से पवित्र किया था। उसी नगर में किसी समय एक सूरसेन नाम का राजा राज करता था। उसकी रानी का नाम पद्मिनी था।

एक दिन वह राजा सभा में बैठा था कि वनपाल ने आकर छः ऋतुओं के फल-फूल लाकर राजा को भेंट किये। राजा इस शुभ भेंट से केवली भगवान का शुभागमन जानकर स्वजन और पुरजन सहित वंदना को गया और भक्तिपूर्वक प्रदक्षिणा करके नमस्कार करके बैठ गया।

श्री मुनिराज ने प्रथम ही मुनिधर्म का वर्णन करके पश्चात् श्रावक धर्म का वर्णन किया। उसमें भी सबसे प्रथम सब धर्मों का मूल सम्यग्दर्शन का उपदेश दिया कि-वस्तु स्वरूप का यथार्थ श्रद्धान हुए बिना सब ज्ञान और चारित्र निष्फल है और वह वस्तुस्वरूप का श्रद्धान सत्यार्थ देव (अर्हन्त) सत्यार्थ गुरु (निर्ग्रन्थ और) दयामयी (जिन प्रणीत) धर्म से ही होता है।

अतएव प्रथम ही इनका परीक्षापूर्वक श्रद्धान होना आवश्यक है तत्पश्चात् अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और परिग्रहत्याग ये पाँच व्रत एकदेश पालन करे तथा इन्हीं के यथोचित पालनार्थ सप्तशीलों (तीन गुणव्रत व चार शिक्षाव्रतों) का भी पालन करें, इत्यादि उपदेश दिया, तब राजा ने हाथ जोड़कर पूछा-हे प्रभु! रानी के प्रति मेरा अधिक स्नेह होने का क्या कारण है? यह सुनकर श्री गुरुदेव ने कहा—

राजा! सुनो, अवन्ती देश में एक उज्जैन नाम का नगर है, वहाँ वीरसेन नाम का राजा और रानी उसकी वीरमती थी। इसी नगर में जिनदत्त नामक एक सेठ थे, उसकी जयावती नामक सेठानी से ईश्वरचन्द्र नाम का पुत्र भी था जो कि अपने मामा की पुत्री चंदना से पाणिग्रहण कर सुख से कालक्षेप करता था।

एक समय सेठ जिनदत्त और सेठानी जयावती कुछ कारण पाकर दिगम्बरी दीक्षा ग्रहण कर मुनि-आर्यिका हो गये और तप के माहात्म्य से अपनी-अपनी आयु पूर्णकर स्वर्ग में देव-देवी हुए और पिता का पद प्राप्त करके ईश्वरचंद सेठ भी चंदना सहित सुख से रहने लगा।

एक दिन अतिमुक्तक नाम के मुनिराज मासोपवास के अनन्तर नगर में पारणा निमित्त आये सो ईश्वरचन्द्र ने भक्ति सहित मुनि को पड़गाह कर अपनी स्त्री से कहा कि श्रीगुरु को आहार देओ। तब चन्दना बोली—

स्वामी! मैं ऋतुवती हूँ, कैसे आहार दूँ? ईश्वरचन्द ने कहा कि गुपचुप रहो, हल्ला मत करो, गुरुजी मासोपवासी हैं इसलिए शीघ्र पारणा कराओ।

चंदना ने पति के वचनानुसार मुनिराज को आहार दे दिया सो श्री मुनिराज तो आहार करके वन में चले गये और यहाँ

तीन ही दिन पश्चात् इस गुप्त पाप का उदय होने से पति-पत्नी दोनों के शरीर में गलित कुष्ट हो गया सो अत्यन्त दुःखी हुए और कष्ट से दिन बिताने लगे।

एक दिन भाग्योदय से श्रीभद्र मुनिराज संघ सहित उद्यान में पधारे, सो नगर के लोग वंदना को गये और ईश्वरचन्द्र भी अपनी भार्यासह वंदना को गया, सो भक्तिपूर्वक नमस्कार कर बैठा और धर्मोपदेश सुना, पश्चात् पूछने लगा–

हे दीनदयाल! हमारे यहाँ कौन पाप का उदय आया है कि जिससे यह विथा उत्पन्न हुई है। तब मुनिराज ने कहा-तुमने गुप्त कपट कर पात्रदान के लोभ से अतिमुक्तक स्वामी को ऋतुवती होने की अवस्था में भी आहारपान व मन, वचन, काय शुद्ध है, कहकर आहार दिया अर्थात् तुमने अपवित्रता को भी पवित्र कहकर चारित्र का अपमान किया है सो इसी पाप के कारण से यह असातावेदनीय कर्म का उदय आया है।

यह सुनकर उक्त दम्पत्ति (सेठ-सेठानी) ने अपने अज्ञान कृत्य पर बहुत पश्चाताप किया और पूछा–

प्रभु! अब कोई उपाय इस पाप से मुक्त होने का बताइये, तब श्री गुरु ने कहा–हे भद्र! सुनो-भादों वदी षष्ठी को चारों प्रकार के आहार का त्याग करके उपवास धारण करो तथा जिनालय में जाकर पंचामृत से अभिषेक पूजन करो, अर्थात् छः प्रकार के उत्तम और प्रासुक फलों सहित अष्टद्रव्य से छः अष्टक चढ़ावो, अर्थात् छः पूजा करो। एक सौ आठ (108) बार णमोकार मंत्र का फलों व फूलों द्वारा जाप करो, चारों संघ को चार प्रकार का दान देवो।

इस प्रकार व्रत करो। तीनों काल सामायिक, व्रत, अभिषेक, पूजन करो, घर के आरंभ व विषयकषायों का उपवास के दिन और रात्रिभर आठ प्रहर तथा धारणा-पारणा के दिन 4 प्रहर, ऐसे सोलह प्रहरों तक त्याग करो।

इस प्रकार छः वर्ष तक यह व्रत करो। पश्चात् उद्यापन करो अर्थात् जहाँ जिनमंदिर न हो, वहाँ छः जिनालय बनवाओ, छहः जिनबिम्ब पधरावो, छः जिनमंदिर का जीर्णोद्धार करावो, छः शास्त्रों का प्रकाशन करो, छः छः सब प्रकार के उपकरण मंदिर में चढ़ाओ, छात्रों को भोजन करावो, चार प्रकार के (आहार, औषधि, शास्त्र और अभयदान) दान देवो।

इस प्रकार दंपत्ति ने व्रत की विधि सुनकर मुनिराज की साक्षीपूर्वक व्रत ग्रहण करके विधि सहित पालन किया। कुछ दिन में अशुभ कर्म की निर्जरा होने से उनका शरीर बिल्कुल निरोग हो गया और आयु के अन्त में संन्यास मरण करके वे दम्पत्ति स्वर्ग में रत्नचूल और रत्नमाला नामक देव-देवी हुए, सो बहुत काल तक सुख भोगते और नंदीश्वर आदि अकृत्रिम चैत्यालयों की पूजा-वंदना करते कालक्षेप करते रहे।

अन्त में आयु पूर्णकर वहाँ से चयकर तुम राजा हुए हो और वह रत्नमाला देवी तुम्हारी पट्टरानी पद्मिनी हुई हैं। सो यह तुम दोनों का पूर्वभवों का संबंध होने से ही प्रेम विशेष हुआ है। यह वार्ता सुनकर राजा को भवभोगों से वैराग्य उत्पन्न हुआ सो उन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र को राज्य देकर आपने दीक्षा ले ली और घोर तपश्चरण किया और तप के प्रभाव से थोड़े ही काल में केवलज्ञान प्राप्त करके वे सिद्धपद को प्राप्त हुए, और रानी पद्मिनी ने भी दीक्षा ली, सो वह भी तप के प्रभाव से स्त्रीलिंग छेदकर सोलहवें स्वर्ग में देव हुआ, वहाँ से चयकर मनुष्य भव लेकर मोक्षपद प्राप्त करेगा।

इस प्रकार ईश्वरदत्त सेठ और चंदना ने इस चंदनषष्ठी व्रत के प्रभाव से नर-सुर के सुख भोगकर मोक्ष प्राप्त किया और जो नर-नारी यह व्रत पालेंगे, वे भी अवश्य उत्तम पद पावेंगे।

(6)

दशलक्षण व्रत

दशलक्षण व्रत विधि–भादों सुदी पंचमी से चतुर्दशी तक यह व्रत किया जाता है। यदि दश दिन के मध्य कोई तिथि क्षय होवे तो चतुर्थी से व्रत प्रारम्भ करें और यदि कोई तिथि अधिक होवे तो ग्यारह दिन का व्रत करना चाहिये। व्रत में दशों दिन उपवास करना चाहिये और यदि शक्ति न हो तो पंचमी और चतुर्दशी को उपवास करना चाहिये तथा मध्य के दिनों में एकाशन करना चाहिये। प्रतिदिन जिनप्रतिमा का पंचामृत या मात्र जल से अभिषेक करके चौबीसी पूजा और दशलक्षण की पूजा करना चाहिये। दश दिन ब्रह्मचर्य व्रत पालन करते हुए प्रतिदिन तीनों काल में पुष्पांजलि करना चाहिये। एक उपवास एक पारणा ऐसे एकांतर से भी व्रत किया जाता है।

इसी प्रकार से माघ और चैत्रमास की शुक्ला पंचमी से चतुर्दशी तक व्रत करना चाहिये। दश वर्ष तक विधिवत् व्रत करके शक्ति के अनुसार उद्यापन विधि करना चाहिये। दशलक्षण व्रत के उद्यापन का विधान करके यथाशक्ति छत्र, चामर आदि उपकरण मंदिर में चढ़ाने चाहिये। उद्यापन शक्ति न होने से व्रत दूना करना चाहिये। व्रत के दिन निम्नलिखित[1] जाप्य करना चाहिये।

1.ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय नमः।

2.ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तममार्दवधर्माङ्गाय नमः।
3.ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमआर्जवधर्माङ्गाय नमः।
4.ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमसत्यधर्माङ्गाय नमः।
5.ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमशौचधर्माङ्गाय नमः।
6.ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमसंयमधर्माङ्गाय नमः।
7.ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमतपोधर्माङ्गाय नमः।
8.ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमत्यागधर्माङ्गाय नमः।
9.ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमआकिंचनधर्माङ्गाय नमः।
10.ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्गताय उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय नमः।

व्रत कथा—धातकीखंड के पूर्व विदेह में विशालाक्षा नाम की नगरी थी। यहाँ के राजा प्रियंकर की पुत्री मृगांकरेखा, मंत्री की पुत्री कामसेना, सेठ मतिसागर की पुत्री मदनवेगा और लक्षभद्र पुरोहित की पुत्री रोहिणी इन चारों कन्याओं ने एक साथ ही गुरु से विद्या प्राप्त की थी अतः इनमें परस्पर बहुत ही प्रेम था। एक दिन बसंत ऋतु में ये कन्यायें वन क्रीड़ा के लिये गईं, वहाँ मुनिराज के दर्शन करके बहुत ही प्रसन्न हुईं। पुनः प्रार्थना की—हे भगवन् ! हमें ऐसा कोई व्रत दीजिये कि जिससे निंद्य स्त्रीपर्याय से छुटकारा मिल जाये। मुनिराज ने कहा—

बालिकाओं ! तुम दशलक्षण व्रत करो, विधिवत् अभिषेक, पूजा, जाप्य आदि करके दश दिन धर्म-ध्यान में व्यतीत करो। भादों सुदी पंचमी से चौदश तक पूर्वोक्त विधि का स्पष्टीकरण कर दिया। इन चारों कन्याओं ने दश वर्ष व्रत करके उद्यापन किया। अंत समय समाधिमरण से मरणकर दशवें स्वर्ग में चारों कन्याओं के जीव महर्द्धिक देव हो गये। वहाँ की सोलह सागर की आयु समाप्त कर इस जंबूद्वीप के मालव देश में उज्जयिनी नगरी के राजा स्थूलभद्र की रानी लक्ष्मीमती के गर्भ से क्रम से देवप्रभु, गुणचन्द्र, पद्मप्रभ और पद्मसारथि नाम के पुत्र हो गये। ब्याह योग्य होने पर निकलप्रभ राजा की ब्राह्मी, कुमारी, रूपवती और मृगनेत्रा इन कन्याओं के साथ क्रम से विवाह हो गया। पिता के दीक्षित हो जाने पर इन राजपुत्रों ने नीतिपूर्वक राज्य का संचालन किया। किसी समय विरक्त होकर चारों ने जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर घोर तपश्चरण किया और अंत में निर्वाणधाम को प्राप्त हो गये। इस प्रकार से इस व्रत के प्रभाव से कन्याओं ने स्त्रीलिंग छेदकर देवों के सुख का अनुभव किया पुनः मर्त्यलोक में राज्य सुख भोगकर अंत में शाश्वत सुख को प्राप्त कर लिया है।

(7)

श्री त्रिलोक तीज व्रत

वन्दों श्री जिनदेव पद, वन्दूं गुरु चरणार।
वन्दूँ माता सरस्वती, कथा कहूँ हितकार।।

जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र संबंधी कुरुजांगल देश में हस्तिनापुर नामक एक अति रमणीक नगर है। वहाँ का राजा कामदुक और रानी कमललोचना थी और उनके विशाखदत्त नाम का पुत्र था। उस राजा के वरदत्त नामक एक मंत्री था, जिसकी विशालाक्षी पत्नी से विजयसुन्दरी नामक एक कन्या बहुत सुन्दर थी, जिसका पाणिग्रहण राजपुत्र विशाखदत्त ने किया था। कितनेक दिन बाद राजा कामदुक की मृत्यु होने पर युवराज विशाखदत्त राजा हुआ।

एक दिन राजा अपने पिता के वियोग से व्याकुल हो उदास बैठा था कि उसी समय उस ओर विहार करते हुए श्री ज्ञानसागर नाम के मुनिवर पधारे। राजा ने उनको भक्तिपूर्वक नमस्कार करके उच्चासन दिया, तब मुनिश्री ने धर्मवृद्धि कह आशीष दी और इस प्रकार संबोधन करने लगे–

राजा! सुनो, यह काल (मृत्यु), सुर (देव) नर, पशु आदि किसी को भी नहीं छोड़ता है। संसार में जो उत्पन्न होता है सो नियम से नष्ट होता है। ऐसी विनाशीक वस्तु के संयोग-वियोग में हर्ष-विषाद ही क्या? यह तो पक्षियों के समान रैन (रात्री) बसेरा है। जहाज में देश-देशान्तर के अनेक लोग आ मिलते हैं, परन्तु अवधि पूरी होने पर सब अपने-अपने देश को चले जाते हैं।

इसी प्रकार ये जीव एक कुल (वंश-परिवार) में अनेक गतियों से आ-आकर एकत्रित होते हैं और अपनी-अपनी आयु पूर्ण कर संचित कर्मानुसार यथायोग्य गतियों में चले जाते हैं। किसी की यह सामर्थ्य नहीं कि क्षणमात्र भी आयु को बढ़ा सके। यदि ऐसा होता तो बड़े-बड़े तीर्थंकर, चक्रवर्ती आदि पुरुषों को क्यों कोई मरने देता? मृत्यु से यद्यपि वियोगजनित दुःख अवश्य ही मोह के वश मालूम होता है, तथापि उपकार भी बहुत होता है। यदि मृत्यु नहीं होती तो रोगी रोग से मुक्त न होता, संसारी कभी सिद्ध न हो सकता, जो जिस दशा में होता, उसी में रह जाता। इसलिए यह मृत्यु उपकारी भी है, ऐसा समझकर शोक तजो। इस शोक से (आर्तध्यान से) अशुभ कर्मों का बंध होता है जिससे अनेकों जन्मांतरों तक रोना पड़ता है। रोना बहुत दुःखदाई है।

मुनिवर के उपदेश से राजा को कुछ धैर्य बंधा। वे शोक तजकर प्रजापालन में तत्पर हुए और मुनिराज भी विहार कर गये।

एक दिन रानी ने संयमभूषण आर्यिका के दर्शन करके पूछा – माताजी! मेरे योग्य कोई व्रत बताइये, जिससे मेरी चिंता दूर होवे और जन्म सुधरे तब आर्यिका जी ने कहा – तुम त्रैलोक्य तीज व्रत करो। भादों सुदी 3 को उपवास करके चौबीस तीर्थंकरों के 72 कोठे का मंडल मांडकर तीन चौबीसी पूजा विधान करो और तीनों काल 108 जाप (ॐ ह्रीं भूतवर्तमानभविष्यत्काल-संबंधिचतुर्विंशतितीर्थङ्करेभ्यो नमः) जपो, रात्रि को जागरण करके भजन व धर्मध्यान में काल बितावो। इस प्रकार तीन वर्ष तक यह व्रत कर पीछे उद्यापन करो, अथवा द्विगुणित करो। इसे दूसरे लोग रोट तीज भी कहते हैं।

उद्यापन करने के समय तीन चौबीसी का मण्डल मांडकर बड़ा विधान पूजन करना चाहिए और प्रत्येक प्रकार के उपकरण तीन तीन श्री मंदिर जी में भेंट कर चर्तुसंघ को चार प्रकार का दान देवो। शास्त्र छपाकर बांटो। इस प्रकार रानी ने व्रत की विधि सुनकर विधिपूर्वक इसे धारण किया। पश्चात् आयु के अंत में समाधिमरण करके सोलहवें स्वर्ग में स्त्रीलिंग छेदकर देव हुई। वहाँ नाना प्रकार के देवोचित सुख भोगे तथा अकृत्रिम जिन चैत्यालयों की वंदना आदि करते हुए यथासाध्य धर्मध्यान में समय बिताया।

पश्चात् वहाँ से चयकर मगधदेश के कंचनपुर नगर में राजा पिंगल और रानी कमललोचना के सुमंगल नाम का अति रूपवान तथा गुणवान पुत्र हुआ। सो वह राजपुत्र एक दिन अपने मित्रों सहित वनक्रीड़ा को गया था कि वहाँ पर परम दिगम्बर मुनि को देखकर उसे मोह उत्पन्न हो गया, सो मुनि की वंदना करके उनके निकट बैठा और पूछने लगा – हे प्रभो! आपको देखकर मुझे मोह क्यों उत्पन्न हुआ?

तब श्री गुरु कहने लगे – वत्स! सुन, यह जीव अनादिकाल से मोहादि कर्मों से लिप्त हो रहा है और क्या जाने इसके किस-किस समय के बांधे हुए कौन-कौन कर्म उदय में आते हैं जिनके कारण यह प्राणी कभी हर्ष व कभी विषाद को प्राप्त होता है।

इस समय जो तुझे मोह हुआ है इसका कारण यह है कि इसके तीसरे भव में तू हस्तिनापुर के राजा विशाखदत्त की भार्या विजयसुन्दरी नाम की रानी थी, सो तुझे संयमभूषण आर्यिका ने सम्बोधन करके त्रैलोक्य तीज का व्रत दिया था, जिसके प्रभाव से तू स्त्रीलिंग छेदकर स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से चयकर यहाँ राजा पिंगल के सुमंगल नाम का पुत्र हुआ है और वह संयमभूषण आर्यिका का जीव वहाँ से समाधिमरण करके स्वर्ग में देव हुआ।

वहाँ से चयकर यहाँ मैं मनुष्य हुआ हूँ, सो कोई कारण पाकर दीक्षा लेकर विहार करता हुआ यहाँ आया हूँ इसलिए तुझे पूर्व स्नेह के कारण यह मोह हुआ है।

हे वत्स! यह मोह महादुःख का देने वाला त्यागने योग्य है। यह सुनकर सुमंगल को वैराग्य उत्पन्न हुआ और उसने इस संसार को विडम्बनारूप जानकर तत्काल जैनेश्वरी दीक्षा धारण की और कितने काल तक घोर तपश्चरण करके केवलज्ञान को प्राप्त होकर मोक्षपद प्राप्त किया।

इस प्रकार विजयसुन्दरी रानी ने त्रैलोक्य तीज व्रत को पालन कर देवों और मनुष्यों के उत्तम सुखों को भोगकर निर्वाण पद प्राप्त किया। सो यदि और भी भव्य जीव श्रद्धा सहित यह व्रत पालें तो वे भी ऐसी उत्तम गति को प्राप्त होवेंगे।

विजयसुन्दरी व्रत किया, तीज त्रिलोक महान।
सुरनर के सुख भोगकर, 'दीप' लहा निर्वाण।।1।।

(8)

पुष्पाञ्जलि व्रत विधि

पुष्पाञ्जलिस्तु भाद्रपदशुक्लां पञ्चमीमारभ्य शुक्लानवमी-पर्यन्तं यथाशक्ति पञ्चोपवासाः भवन्ति।।

अर्थ – पुष्पांजलिव्रत भाद्रपद शुक्ला पंचमी से नवमी पर्यन्त किया जाता है। इसमें पाँच उपवास अपनी शक्ति के अनुसार किये जाते हैं।

विवेचन – भादों सुदी पंचमी से नवमी तक पाँच दिन पंचमेरु की स्थापना करके चौबीस तीर्थंकरों की पूजा करनी चाहिए। अभिषेक भी प्रतिदिन किया जाता है। पाँच अष्टक और पाँच जयमाल पढ़ी जाती हैं। 'ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसंबंध्यशीति-जिनालयेभ्यो नमः' मंत्र का प्रतिदिन तीन बार जाप किया जाता है। यदि शक्ति हो तो पाँचों उपवास, अन्यथा पञ्चमी को उपवास, शेष चार दिन रस त्याग कर एकाशन करना चाहिए। रात्रि जागरण विषय-कषायों को अल्प करने का प्रयत्न एवं आरंभ-परिग्रह का त्याग करने का प्रयत्न अवश्य करना चाहिए। विकथाओं को कहने और सुनने का त्याग भी इस व्रत के पालने वाले को करना आवश्यक है। इस व्रत का पालन पाँच वर्ष तक करना चाहिए, तत्पश्चात् उद्यापन करके व्रत की समाप्ति कर दी जाती है।

व्रत की विशेष विधि और व्रत का फल

पुष्पांजलिव्रतं पञ्चदिनपर्यंतं करणीयम्। तत्र केतकीकुसुमादिभिः चतुर्विंशतिविकसितसुगंधित-सुमनोभिश्चतुर्विंशतिजिनान् पूजयेत्। यथोक्तकुसुमाभावे पूजयेत् पीततन्दुलैः। पञ्चवर्षानन्तरं उद्यापनं कार्यम्। केवलज्ञानसम्प्राप्तिरेतस्य परमं फलम्। तिथिक्षये वा तिथिवृद्धौ पूर्वोक्त एव क्रमः स्मर्तव्यः। पुष्पाञ्जलिव्रते पंचमीषष्ठ्योरुपवासः सप्तम्यां पारणा अष्टमीनवम्योरुपवासः दशम्यां पारणा, एकान्तरेण तु तिथिक्षये चादिदिने गृहीते पारणाद्वयं

मध्ये कार्यम्; पञ्चम्यामष्टम्यां च षष्ठ्यामष्टम्यां वा यथैकान्तरं स्यात्तथा कार्यम्; एतत् पुष्पांजलिव्रतं कर्मरोगहरं मुक्तिप्रदं च पारम्पर्येण भवति।

अर्थ—पुष्पांजलि व्रत को पाँच दिन तक करना चाहिए। इस व्रत में केतकी, बेला, चम्पा आदि विकसित और सुगंधित पुष्पों से चौबीस भगवान की पूजा करनी चाहिए। यदि वास्तविक पुष्प न हों या वास्तविक पुष्पों से पूजन करना उपयुक्त न समझें तो पीले चावलों से भगवान की पूजा करनी चाहिए। पाँच वर्ष के पश्चात् व्रत का उद्यापन कर देना होता है। इस व्रत का फल केवलज्ञान की प्राप्ति होना बताया गया है अर्थात् विधिपूर्वक पुष्पांजलि व्रत के पालने से केवलज्ञान की प्राप्ति होती है। तिथिक्षय या तिथिवृद्धि होने पर पूर्वोक्त क्रम ही अवगत करना चाहिए। तिथिक्षय में एक दिन पहले से और तिथिवृद्धि में एक दिन अधिक व्रत किया जाता है। पुष्पांजलि व्रत में पंचमी और षष्ठी इन दोनों दिनों का उपवास, सप्तमी को पारणा, अष्टमी और नवमी का उपवास तथा दशमी को पारणा की जाती है। एकान्तर उपवास करने वाले को अर्थात् एक दिन उपवास दूसरे दिन पारणा, पुनः उपवास तत्पश्चात् पारणा इस क्रम से उपवास करने वाले को तिथिक्षय होने पर एक दिन पहले से व्रत करने के कारण मध्य में दो पारणाएँ करनी चाहिए। पंचमी और अष्टमी की पारणा अथवा षष्ठी और अष्टमी की पारणा की जाती है। एकान्तर उपवास और पारणा का क्रम चल सके, ऐसा करना चाहिए। यह पुष्पांजलि व्रत कर्मरूपी रोग को दूर करने वाला, लौकिक अभ्युदय का प्रदाता एवं परम्परा से मोक्षलक्ष्मी को प्रदान करने वाला है।

विवेचन—पुष्पांजलि व्रत की विधि पहले लिखी जा चुकी है। आचार्य ने यहाँ पर कुछ विशेष बातें इस व्रत के संबंध में बतलायी हैं। पुष्पांजलि शब्द का अर्थ है कि पुष्पों का समुदाय अर्थात् सुगंधित, विकसित और कीटाणु रहित पुष्पों से जिनेन्द्र भगवान की पूजा इस व्रत वाले को करनी चाहिए। पहले व्रत विधि में लिखे गये जाप को भी पुष्पों से ही करना चाहिए। यदि पुष्प चढ़ाने से एतराज हो तो पीले चावलों से पूजन तथा लवंगों से जाप करना चाहिए। पाँचों दिन पूजन और जाप करना आवश्यक है। इस व्रत का बड़ा भारी माहात्म्य बताया गया है विधिपूर्वक इसके पालने से केवलज्ञान की प्राप्ति परम्परा से होती है, कर्मरोग दूर होता है तथा नाना प्रकार के लौकिक ऐश्वर्य, धन-धान्यादि विभूतियाँ प्राप्त होती हैं। इसकी गणना काम्य व्रतों में इसीलिए की गई है कि इस व्रत को विधिपूर्वक पालकर कोई भी व्यक्ति अपनी लौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार की कामनाओं को पूर्ण कर सकता है।

(9)

श्री आकाशपंचमी व्रत कथा

आर्यखण्ड के सोरठ देश में तिलकपुर नाम का एक विशाल नगर था। वहाँ महीपाल नाम का राजा और विचक्षणा नामक रानी थी। उसी नगर में भद्रशाल नाम का व्यापारी रहता था उसकी नन्दा नाम की स्त्री से विशाला नाम की पुत्री उत्पन्न हुई।

यद्यपि वह कन्या अत्यन्त रूपवान थी, तथापि इसके मुख पर सफेद कोढ़ हो जाने से सारी सुन्दरता नष्ट हो गई थी। इसलिए उसके माता-पिता तथा वह कन्या स्वयं भी रोया करती थी, परन्तु कर्मों से क्या वश है? निदान माता के उपदेश से पुत्री धर्मध्यान में रत रहने लगी, जिससे कुछ दुःख कम हुआ।

एक दिन एक वैद्य आया और उसने सिद्धचक्र की आराधना करके औषधि दी जिससे उस कन्या का रोग दूर हो गया। तब उस भद्रशाल ने अपनी कन्या उसी वैद्य को ब्याह दी। पश्चात् वह पिंगल वैद्य इस विशाला नाम की वणिक पुत्री के साथ कितने ही दिन पीछे देशाटन करता हुआ, चित्तौड़गढ़ की ओर आया, वहाँ पर भीलों ने उसे मारकर सब धन लूट लिया।

निदान विशाला वहाँ से पति और द्रव्य रहित हुई नगर के जिनालय में गई और जिनराज के दर्शन करके वहाँ तिष्ठे हुए श्री गुरु को नमस्कार करके बोली—प्रभु! मैं अनाथनी हूँ, मेरा सर्वस्व खो गया, पति भी मारा गया और द्रव्य भी लूट गया। अब मुझे कुछ भी नहीं सूझता है कि क्या करूँ, कृपाकर कुछ कल्याण का मार्ग बताइये।

तब मुनिराज ने कहा-बेटी सुनो, यह जीव सदैव अपने ही पूर्वकृत कर्मों का शुभाशुभ फल भोगता है। तू प्रथम जन्म में इसी नगर में वेश्या थी। तू रूपवान तो थी ही, परन्तु गायन विद्या में भी निपुण थी।

एक समय सोमदत्त नाम के मुनिराज यहाँ आये। यह सुनकर नगर के लोग वंदना को गये और बहुत उत्साह से उत्सव किया सो जैसे सूर्य का प्रकाश उल्लू को अच्छा नहीं लगता, उसी प्रकार कुछ मिथ्यात्वी विधर्मी लोगों ने मुनि से वाद-विवाद किया और अन्त में हारकर वेश्या (तुझे ही) को मुनि के पास ठगने के लिए (भ्रष्ट करने को) भेजा तो तूने पूर्ण स्त्री चरित्र फैलाया, सब प्रकार रिझाया, शरीर का आलिंगन भी किया, परन्तु जैसे सूर्य पर धूल फेंकने से सूर्य का कुछ बिगड़ता ही नहीं किन्तु फेंकने वाले ही का उल्टा बिगाड़ होता है उसी प्रकार मुनिराज तो अचल मेरुवत् स्थिर रहे और तू हार मानकर लौट आई।

इससे इन मिथ्यात्वी अधर्मियों को बड़ा दुःख हुआ और तुझे भी बहुत पश्चाताप हुआ। अन्त में तुझे कोढ़ हो गया सो

दुःखित अवस्था में मरकर तू चौथे नर्क गई। वहाँ से आकर तू यहाँ वणिक के घर पुत्री हुई है। यहाँ भी तुझे सफेद कोढ़ हुआ था। सो पिंगल वैद्य ने तुझे अच्छा किया और उसी से तेरा पाणिग्रहण भी हुआ था।

पश्चात् पूर्व पाप के उदय से चोरों ने उसे मार डाला और तू उससे बचकर यहाँ तक आई है। अब यदि तू कुछ धर्माचरण धारण करेगी, तो शीघ्र ही इस पाप से छूटेगी इसलिए सबसे प्रथम तू सम्यग्दर्शन को स्वीकार कर अर्थात् श्री अर्हन्त देव, निर्ग्रन्थ गुरु और दयामयी जिन भगवान के कहे हुए धर्मशास्त्र के सिवाय अन्य मिथ्या देव, गुरु और धर्म को छोड़ जीवादिक सात तत्त्वों का श्रद्धान कर और सम्यग्दर्शन के निःशंकित आदि आठ अंगों का पालन करके उसके 25 मल दोषों का त्याग कर, तब निर्मल सम्यग्दर्शन सधेगा। इस प्रकार सम्यक्त्वपूर्वक श्रावक के अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और परिग्रह परिमाण आदि 12 व्रत को पालन करते हुए आकाशपंचमी व्रत को भी पालन कर।

यह व्रत भादों सुदी 5 को किया जाता है। इस दिन चार प्रकार का आहार त्यागकर उपवास धारण करे और अष्ट प्रकार के द्रव्य से श्रीजिनालय में जाकर भगवान का अभिषेकपूर्वक पूजन करे। पश्चात् रात्रि के समय खुले मैदान में या छत (अगासी) पर बैठकर भजनपूर्वक जागरण करे तथा वहाँ भी सिंहासन रखकर श्री चौबीस तीर्थंकरों की प्रतिमा स्थापन करे और प्रत्येक प्रहर में अभिषेक करके पूजन करे और यदि उस समय उस स्थान पर वर्षा आदि के कारण कितने ही उपसर्ग आवें तो सब सहन करे परन्तु स्थान को न छोड़े।

तीनों समय महामंत्र नवकार के 108 जाप करे। इस प्रकार 5 वर्ष तक करे। जब व्रत पूरा हो जावे तो उत्साह सहित उद्यापन करे।

परम्परा में भगवान सुमतिनाथ की पूजा एवं जाप्य करते हैं **– ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय नमः।**

छत्र, चमर, सिंहासन, तोरण, पूजन के बर्तन आदि प्रत्येक 5 (पांच) नग मंदिर में भेंट करे और कम से कम पांच शास्त्र पधरावे। चार प्रकार के संघ को चारों प्रकार का दान देवे और भी विशेष प्रभावना करे। इस प्रकार विशाला कन्या ने श्रद्धापूर्वक बारह व्रत स्वीकार किये और इस आकाशपंचमी व्रत को भी विधि सहित पालन किया। पश्चात् समाधिमरण कर वह चौथे स्वर्ग में मणिभद्र नाम का देव हुआ।

वहाँ उसने देवाँगनाओं सहित क्रीड़ा करते हुए अनेक तीर्थों के दर्शन, पूजा, वंदना तथा समवसरण आदि की वंदना की। इस प्रकार सात सागर की आयु पूर्ण कर उज्जैन नगर में प्रियंगुसुन्दर नामक राजा के यहाँ तारामती नामक रानी से सदानंद नामक पुत्र हुआ, सो कितने काल राज्योचित सुख भोगे।

पश्चात् एक दिन नगर के बाहर वन में मुनिराज के दर्शन कर और उनके मुख से संसार से पार उतारने वाला धर्म का उपदेश सुनकर उसने वैराग्य को प्राप्त होकर जिनदीक्षा अंगीकार की और शुक्लध्यान के बल से केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्षपद प्राप्त किया।

इस प्रकार विशाला नाम की वणिक कन्या ने व्रत के प्रभाव से स्वर्ग और मोक्षपद प्राप्त किया, तो यदि श्रद्धा सहित अन्य जीव यह व्रत पालेंगे तो क्यों न उत्तम सुखों को प्राप्त होवेंगे? अवश्य होंगे।

(10)

निर्दोष सप्तमी व्रत का स्वरूप

निर्दोष सप्तमी व्रत भाद्रपद शुक्ला सप्तमी को करना चाहिए। इस व्रत में षष्ठी तिथि से संयम ग्रहण करना चाहिए। इस व्रत की समस्त विधि मुकुटसप्तमी के ही समान है, अंतर इतना है कि इसमें रात भी जागरणपूर्वक व्यतीत की जाती है अथवा रात के पिछले प्रहर में अल्प निद्रा लेनी चाहिए। **'ॐ ह्रीं सर्वविघ्ननिवारकाय श्री शांतिनाथस्वामिने नमः स्वाहा'** इस मंत्र का जाप करना होगा। कषाय, राग-द्वेष-मोह आदि विकारों का भी त्याग करना अनिवार्य है, इस व्रत को इस प्रकार करना चाहिए जिससे किसी भी प्रकार का दोष नहीं लगे। आत्मपरिणामों को निर्मल और विशुद्ध रखने का प्रयास करना चाहिए। इस व्रत की अवधि भी सात वर्ष है, पश्चात् उद्यापन कर छोड़ देना चाहिए।

कथा — मगध देश के पाटली पुत्र (पटना) नगर में पृथ्वीराज राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम मदनावती था। उसी नगर में अर्हदास नाम का एक सेठ रहता था जिसकी लक्ष्मीमती नाम की स्त्री थी और दूसरा सेठ धनपति जिसकी स्त्री का नाम नंदनी था, नंदनी सेठानी के मुरारी नाम का एक पुत्र था, सो सांप के काटने से मर गया इसलिए नंदनी तथा उसके घर के लोग अत्यंत करुणाजनक विलाप करते थे अर्थात् सब ही शोक में निमग्न थे।

नंदनी तो बहुत शोकाकुल रहती थी। उसे ज्यों-ज्यों समझाया जाता था त्यों-त्यों अधिकाधिक शोक करती थी। एक दिन नंदनी के रुदन (जिसमें पुत्र के गुणगान करती हुई रोती थी) को सुनकर लक्ष्मीमती सेठानी ने समझा कि नंदनी के घर गायन हो रहा है, तब वह सोचने लगी कि नंदनी के घर तो कोई मंगल कार्य नहीं है अर्थात् ब्याह व पुत्र जन्मादि उत्सव तो कुछ भी नहीं है तब किस कारण गायन हो रहा है? अच्छा चलकर पूछूं तो सही, क्या बात है?

ऐसा विचार कर लक्ष्मीमती सहज स्वभाव से हँसती हुई नंदनी के घर गई और नंदनी से हँसते हुए पूछा–ऐ बहिन! तुम्हारे घर कोई मंगल कार्य है ऐसा तो सुना ही नहीं गया, तब यह गायन किसलिए होता रहता है, कृपया बताओ।

तब नंदनी गुस्सा करके बोली–अरी बाई! तुझे हँसी की पड़ी है और मुझ पर दुःख का पहाड़ टूट पड़ा है, मेरा कुल का दीपक प्यारा, आँखों का तारा पुत्र सर्प के काटने से मर गया है, इसी से मेरी नींद और भूख प्यास सब चली गई है, मुझे संसार में अंधेरा लगता है।

दुःखियों ने दुःख रोया, सुखियों ने हँस दिया। मुझे रोना आता है और तुझे हँसना। जा जा! अपने घर। एक दिन तुझे भी अतुल दुःख आवेगा, तब जानेगी कि दूसरे का दुःख कैसा होता है?

इस पर लक्ष्मीमती अपने घर चली गई और नंदनी ने उससे निःकारण वैर करके सांप मँगाया, और एक घड़े में रखकर लक्ष्मीमती के घर भिजवा दिया और कहला दिया कि इस घड़े में सुंदर हार रखा है सो तुम पहनो।

नंदनी का अभिप्राय था कि जब लक्ष्मीमती घड़े में हाथ डालेगी तो सांप इसे काटेगा और वह दुःखियों की हँसी करने का फल पावेगी।

जब दासी लक्ष्मीमती के घर वह विषैला सांप का घड़ा लेकर गई और यथायोग्य सुश्रूषा के वचन कहकर घड़ा भेंट कर दिया, तब लक्ष्मीमती ने दासी को पारितोषिक देकर विदा किया और अपने घड़े को उघाड़कर उसमें से हार निकालकर पहन लिया। (लक्ष्मीमती के पुण्य के प्रभाव से सांप का हार हो गया है) और हर्ष सहित जिनालय की वंदना निमित्त गई। सो मदनावती रानी ने उसे देख लिया और राजा से लक्ष्मीमती जैसा हार मंगा देने के लिये हठ करने लगी।

इस पर राजा ने अर्हदास सेठ को बुलाकर कहा–हे सेठ! जैसा हार तुम्हारी सेठानी का है, वैसा ही रानी के लिए बनवा दो, और जो द्रव्य लगे भंडार से ले जाओ। अब अर्हदास श्रेष्ठी ने सेठानी से लेकर वही हार राजा को दिया, सो राजा के हाथ पहुँचते ही हार का पुनः सर्प हो गया।

इस प्रकार वह सांप अर्हदास के हाथ में हार और राजा के हाथ में सांप हो जाता था। यह देखकर राजा और सभाजन सभी आश्चर्ययुक्त हो हार का वृत्तांत पूछने लगे परंतु सेठ कुछ भी कारण न बता सका।

भाग्योदय से वहाँ मुनि संघ आया सो राजा और प्रजा सभी वंदना को गये। वंदना कर धर्मोपदेश सुना और अंत में राजा ने वह हार और सांप वाली आश्चर्य की बात पूछी, तब मुनिराज ने कहा–हे राजा! इस सेठ ने पूर्व भव में निर्दोष सप्तमी का व्रत किया है, उसी के पुण्य फल से यह सांप का हार बन जाता है।

और तो बात ही क्या है, इस व्रत के फल से स्वर्ग और अनुक्रम से मोक्षपद भी प्राप्त होता है, और इस व्रत की विधि इस प्रकार है, सो सुनो–

भादों सुदी सप्तमी को आवश्यक वस्त्रादि परिग्रह रख शेष समस्त आरंभ व परिग्रह का त्याग करके श्री जिनमंदिर में जावे और प्रभु का अभिषेक आरंभ करे अर्थात् वहाँ पर दूध का कुण्ड भरकर उसमें प्रतिमा स्थापित करे और पंचामृत का अभिषेक करने के पश्चात् अष्टद्रव्य से भाव सहित पूजन करे और स्वाध्याय करे।

इस प्रकार धर्मध्यान में समय बितावे। पश्चात् दूसरे दिन हर्षोत्सव सहित जिनदेव का पूजन-अर्चन करके अतिथि को भोजन कराकर और दीन-दुःखियों को यथावश्यक दान देकर आप भोजन करे। इस प्रकार सात वर्ष तक यह व्रत करके पश्चात् विधिपूर्वक उद्यापन करे और यदि उद्यापन की शक्ति न हो, तो दूने वर्षों तक व्रत करे।

उद्यापन इस प्रकार करे–बारह प्रकार का पकवान और बारह प्रकार के फल तथा मेवा श्रावकों को बाँटे। बारह-बारह कलश, झारी, चन्दोवा आदि समस्त उपकरण जिनमंदिर में चढ़ावे। बारह शास्त्र लिखाकर पधरावे और चतुर्विध दान करे।

राजा ने यह सब व्रत विधान सुनकर स्वशक्ति अनुसार श्रद्धा सहित इस व्रत को पालन किया और अंत में आयु पूर्ण कर (समाधिमरण कर) सातवें स्वर्ग में देव हुआ और भी जो भव्य जीव श्रद्धा सहित इस व्रत को पालेंगे तो वे भी उत्तमोत्तम सुखों को प्राप्त होंगे।

(11)

सुगंधदशमी व्रत

जम्बूद्वीप के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में शिवमंदिर नाम का एक नगर है। वहाँ का राजा प्रियंकर और रानी मनोरमा थी सो वे अपने धन, यौवन आदि के ऐश्वर्य में मदोन्मत्त हुए जीवन के दिन पूरे करते थे। धर्म किसे कहते हैं, वह उन्हें मालूम भी न था।

एक समय सुगुप्त नाम के मुनिराज कृश शरीर दिगम्बर मुद्रायुक्त आहार के निमित्त बस्ती में आये, उन्हें देखकर रानी ने अत्यंत घृणापूर्वक उनकी निंदा की और पान की पीक मुनि पर थूंक दी। सो मुनि तो अन्तराय होने के कारण बिना आहार लिए ही पीछे वन में चले गये और कर्मों की विचित्रता पर विचार कर समभाव धारण कर ध्यान में निमग्न हो गये।

परन्तु थोड़े दिन पश्चात् रानी मरकर गधी हुई, फिर सूकरी हुई, फिर कूकरी हुई, फिर वहाँ से मरकर मगध देश के बसंततिलका नगर में विजयसेन राजा की रानी चित्रलेखा की दुर्गन्धा नाम की कन्या हुई। सो इसके शरीर से अत्यन्त दुर्गन्ध निकला करती थी।

एक समय राजा अपनी सभा में बैठा था कि धनपाल ने आकर समाचार दिया कि हे राजन्! आपके नगर के वन में सागरसेन नाम के मुनिराज चतुर्विध संघ सहित पधारे हैं।

यह समाचार सुनकर राजा प्रजा सहित वन्दना को गया और भक्तिपूर्वक नतमस्तक हो राजा ने स्तुति, वंदना की। पश्चात् मुनि तथा श्रावक के धर्मों के उपदेश सुनकर सबने यथाशक्ति व्रतादिक लिये। किसी ने सम्यक्त्व ही अंगीकार किया। इस प्रकार उपदेश सुनने के अनन्तर राजा ने नम्रतापूर्वक पूछा–

हे मुनिराज! यह मेरी कन्या दुर्गन्धा किसी पाप के उदय से ऐसी हुई है सो कृपाकर कहिए। तब श्री गुरु ने उसके पूर्व भवों का समस्त वृत्तांत मुनि की निंदादिक कह सुनाया, जिसको सुनकर राजा और कन्या सभी को पश्चाताप हुआ। निदान राजा ने पूछा–प्रभो! इस पाप से छूटने का कौन सा उपाय है? तब श्री गुरु ने कहा–

समस्त धर्मों का मूल सम्यग्दर्शन है, सो अर्हन्तदेव, निर्ग्रन्थ गुरु और जिनभाषित धर्म में श्रद्धा करके उनके सिवाय अन्य रागी-द्वेषी देव-भेषी गुरु, हिंसामय धर्म का परित्याग, अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और परिग्रह प्रमाण इन पाँच व्रतों को अंगीकार करे और सुगंध दशमी का व्रत पालन करे जिससे अशुभ कर्म का क्षय होवे।

इस व्रत की विधि इस प्रकार है–**कि भादों सुदी दशमी के दिन चारों प्रकार के आहारों को त्यागकर समस्त गृहारम्भ का त्याग करे और परिग्रह का भी प्रमाणकर जिनालय में जाकर श्री जिनेन्द्रदेव की भाव सहित अभिषेकपूर्वक पूजा करे।** सामायिक स्वाध्याय करे। धर्म कथा के सिवाय अन्य विकथाओं का त्याग करे, रात्रि में भजनपूर्वक जागरण करे। पश्चात् दूसरे दिन चौबीस तीर्थंकरों की अभिषेकपूर्वक पूजा करके अतिथियों (मुनि व श्रावक) को भोजन कराकर आप पारणा करे। चारों प्रकार के दान देवे। इस प्रकार दश वर्ष तक यह व्रत पालन कर पश्चात् उद्यापन करे।

अर्थात् चमर, छत्र, घण्टा, झारी, ध्वजा आदि दश-दश उपकरण जिनमंदिरों में भेंट देवे और दश प्रकार के श्रीफल आदि फल दश घर के श्रावकों को बांटे। यदि उद्यापन की शक्ति न होवे, तो दूना व्रत करे।

उत्तम व्रत उपवास करने से, मध्यम कांजी आहार और जघन्य एकाशन करने से होता है।

इस व्रत के दिन श्री शीतलनाथ भगवान की पूजा करें एवं **''ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ जिनेंद्राय नमः''** मंत्र का जाप्य करें।

इस प्रकार राजा प्रजा सबने व्रत की विधि सुनकर अनुमोदना की और स्वस्थान को गये। दुर्गन्धा कन्या ने मन, वचन-काय से सम्यक्त्वपूर्वक व्रत को पालन किया। एक समय दसवें तीर्थंकर श्री शीतलनाथ भगवान के कल्याणक के समय देव तथा इन्द्रों का आगमन देखकर उस दुर्गन्धा कन्या ने निदान किया कि मेरा जन्म स्वर्ग में होवे, सो निदान के प्रभाव से यह राजकन्या स्वर्ग में अप्सरा हुई और उसका पिता राजा मरकर दसवें स्वर्ग में देव हुआ।

यह दुर्गन्धा कन्या अप्सरा के भव से आकर मगध देश के पृथ्वीतिलक नगर में राजा महिपाल की रानी मदनसुन्दरी के मदनावती नाम की कन्या हुई, सो अत्यन्त रूपवान और सुगंधित शरीर हुई और कौशाम्बी नगरी के राजा अरिनंदन के पुत्र पुरुषोत्तम के साथ इस मदनावती का ब्याह हुआ। इस प्रकार वे दम्पत्ति सुखपूर्वक कालक्षेप करने लगे।

एक समय वन में सुगुप्ताचार्य नाम के आचार्य संघ सहित आये सो वह राजकुमार पुरुषोत्तम अपनी स्त्री सहित वंदना को गया तथा और भी नगर के लोग वंदना को गये सो स्तुति, नमस्कार आदि करने के अनन्तर श्रीगुरु के मुख से जीवादि तत्त्वों का उपदेश सुना। पश्चात् पुरुषोत्तम ने कहा-

हे स्वामी! मेरी यह मदनावती स्त्री किस कारण से ऐसी रूपवान और अति सुगंधित शरीर है? तब श्री गुरु ने मदनावती के पूर्व भवांतर कहे और सुगंधदशमी के व्रत का माहात्म्य बताया तो पुरुषोत्तम और मदनावती दोनों अपने भवांतर की कथा सुनकर संसार, देह भोगों से विरक्त हो दीक्षा लेकर तपश्चरण करने लगे।

इस प्रकार तपश्चरण के प्रभाव से मदनावती स्त्रीलिंग छेदकर सोलहवें स्वर्ग में देव हुई। वहाँ बाईस सागर सुख से आयु पूर्ण करके अंत समय चयकर मगध देश के वसुंधा नगरी में मकरकेतु राजा के यहाँ देवी पट्टरानी के कनककेतु नाम का सुन्दर गुणवान पुत्र हुआ।

पिता के दीक्षा ले लेने पर कितने काल राज्य करके वह भी अपने मकरध्वज पुत्र को राज्य दे दीक्षा लेकर तपश्चरण करके और देश-विदेशों में विहार करके अनेक जीवों को धर्म के मार्ग में लगाने लगे। इस प्रकार कितने काल कनककेतु मुनिनाथ को केवलज्ञान हुआ और बहुत काल तक उपदेशरूपी अमृत की वृष्टि करके शेष अघाति कर्मों का नाशकर परम पद मोक्ष को

प्राप्त हुए।

इस प्रकार सुगंधदशमी का व्रत पालकर दुर्गन्धा भी अनुक्रम से मोक्ष को प्राप्त हुई तो भव्य जीव यदि यह व्रत पालें तो अवश्य ही उत्तमोत्तम सुखों को पावें।

(12)

अनन्त चौदश व्रत विधि

अनन्तव्रते तु एकादश्यामुपवासः द्वादश्यामेकभक्तं त्रयोदश्यां काञ्जिकं चतुर्दश्यामुपवासस्तदभावे यथा शक्तिस्तथा कार्यम्। दिनहानिवृद्धौ स एव क्रमः स्मर्त्तव्यः।

अर्थ—अनन्त व्रत में भाद्रपद शुक्ला एकादशी को उपवास, द्वादशी को एकाशन, त्रयोदशी को कांजी – छाछ अथवा छाछ में जौ, बाजरा के आटे को मिलाकर महेरी – एक प्रकार की कढ़ी बनाकर लेना और चतुर्दशी को उपवास करना चाहिए। यदि इस विधि के अनुसार व्रत पालन करने की शक्ति न हो तो शक्ति के अनुसार व्रत करना चाहिए। तिथि-हानि या तिथि-वृद्धि होने पर पूर्वोक्त क्रम ही अवगत करना चाहिए अर्थात् तिथि-हानि में एक दिन पहले से और तिथि- वृद्धि में एक दिन अधिक व्रत करना होता है।

विवेचन—अनन्तव्रत भादों सुदी एकादशी से आरंभ किया जाता है। प्रथम एकादशी को उपवास कर द्वादशी को एकाशन करे अर्थात् मौन सहित स्वाद रहित प्रासुक भोजन ग्रहण करे, सात प्रकार के गृहस्थों के अन्तराय का पालन करे। त्रयोदशी को जिनाभिषेक, पूजन-पाठ के पश्चात् छाछ या छाछ में जौ, बाजरा के आटे से बनाई गई महेरी–एक प्रकार की कढ़ी का आहार ले। चतुर्दशी के दिन प्रोषध करे तथा सोना, चाँदी या रेशम-सूत का अनन्त बनाये, जिसमें चौदह गाँठ लगाये।

प्रथम गाँठ पर ऋषभनाथ से लेकर अनन्तनाथ तक चौदह तीर्थंकरों के नामों का उच्चारण, दूसरी गाँठ पर सिद्धपरमेष्ठी के चौदह[1] गुणों का चिन्तन, तीसरी पर उन चौदह मुनियों का नामोच्चारण जो मति-श्रुत-अवधिज्ञान के धारी हुए हैं, चौथी पर अर्हन्त भगवान के चौदह देवकृत अतिशयों का चिन्तन, पाँचवीं पर जिनवाणी के चौदह पूर्वों का चिन्तन, छठवीं पर चौदह गुणस्थानों का चिन्तन, सातवीं पर चौदह मार्गणाओं का स्वरूप, आठवीं पर चौदह जीवसमासों का स्वरूप, नौवीं पर गंगादि चौदह नदियों का उच्चारण, दसवीं पर चौदह राजू प्रमाण ऊँचे लोक का स्वरूप, ग्यारहवीं पर चक्रवर्ती के चौदह रत्नों[2] का, बारहवीं पर चौदह स्वरों का, तेरहवीं पर चौदह तिथियों का एवं चौदहवीं गाँठ पर आभ्यन्तर चौदह प्रकार के परिग्रह से रहित मुनियों का चिन्तन करना चाहिए। इस प्रकार अनन्त का निर्माण करना चाहिए।

पूजा करने की विधि यह है कि शुद्ध कोरा घड़ा लेकर उसका प्रक्षाल करना चाहिए। पश्चात् उस घड़े पर चंदन, केशर आदि सुगंधित वस्तुओं का लेप करना तथा उसके भीतर सोना, चाँदी या ताँबे के सिक्के रखकर सफेद वस्त्र से ढक देना चाहिए। घड़े पर पुष्पमालाएँ डालकर उसके ऊपर थाली प्रक्षाल करके रख देनी चाहिए। थाली में अनन्त व्रत का माड़ना और यंत्र लिखना, पश्चात् चौबीसी एवं पूर्वोक्त विधि से गाँठ दिया हुआ अनन्त विराजमान करना होता है। अनन्त का अभिषेक कर चंदनकेशर का लेप किया जाता है। पश्चात् आदिनाथ से लेकर अनन्तनाथ तक चौदह भगवानों की स्थापना यंत्र पर की जाती है। अष्ट द्रव्य से पूजा करने के उपरांत **'ॐ ह्रीं अर्हन्नमः अनन्तकेवलिने नमः'** इस मंत्र को 108 बार पढ़कर पुष्प चढ़ाना चाहिए अथवा पुष्पों से जाप करना चाहिए। पश्चात् **'ॐ झ्रीं क्ष्वीं हं स अमृतवाहिने नमः'**, **अनेन मंत्रेण सुरभिमुद्रां धृत्वा उत्तमगन्धोदकप्रोक्षणं कुर्यात्'** अर्थात् **'ॐ झ्रीं क्ष्वीं हं स अमृतवाहिने नमः'** इस मंत्र को तीन बार पढ़कर सुरभि मुद्रा द्वारा सुगंधित जल से अनन्त का सिंचन करना चाहिए। अनन्तर चौदहों भगवानों की पूजा करनी चाहिए।

'ॐ ह्रीं अनन्ततीर्थंकराय ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा नमः सर्वशांतिं तुष्टिं सौभाग्यमायुरारोग्यैश्वर्यमष्ट-सिद्धिं कुरु कुरु सर्वविघ्नविनाशनं कुरु कुरु स्वाहा' इस मंत्र से प्रत्येक भगवान की पूजा के अनन्तर अर्घ्य चढ़ाना चाहिए। **'ॐ ह्रीं हं स अनन्तकेवलीभगवान् धर्मश्रीबलायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धिं कुरु कुरु स्वाहा'** इस मंत्र को पढ़कर अनन्त पर चढ़ाये हुए पुष्पों की आशिका एवं **'ॐ ह्रीं अर्हन्नमः सर्वकर्मबंधनविमुक्ताय नमः स्वाहा'** इस मंत्र को पढ़कर शांति जल की आशिका लेनी चाहिए। इस व्रत में **'ॐ ह्रीं अर्हं हं स अनन्तकेवलिने नमः'** मंत्र का जाप करना चाहिए। पूर्णिमा को पूजन के पश्चात् अनन्त को गले या भुजा में धारण करे।

कथा—इसी जम्बूद्वीप के आर्यखण्डों में कौशल देश है। उसमें अयोध्या नगरी के पास पद्मखण्ड नाम का ग्राम था। उस ग्राम में सोमशर्मा नाम का एक अति दरिद्र ब्राह्मण अपनी सोमा

---

1. तपसिद्धि, विनयसिद्धि, संयमसिद्धि, चारित्रसिद्धि, श्रुताभ्यास, निश्चयात्मक भाव, ज्ञान, बल, दर्शन, वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, अव्याबाधत्व।

2. गृहपति, सेनापति, शिल्पी, पुरोहित, स्त्री, हाथी, घोड़ा, चक्र, असि (तलवार), छत्र, दण्ड, मणि, चर्म, कांकिणी। कांकिणी रत्न की विशेषता यह होती है कि इससे कठोर से कठोर वस्तु पर भी लिखा जा सकता है, इससे सूर्य के प्रकाश से भी तेज प्रकाश निकलता है।

नाम की स्त्री और बहुत सी पुत्रियों सहित रहता था। वह (ब्राह्मण) विद्याहीन और दरिद्र होने के कारण भिक्षा मांगकर उदर पोषण करता था, तो भी भरपेट खाने को नहीं पाता था।

तब एक दिन अपनी स्त्री की सम्मति से उसने सहकुटुम्ब प्रस्थान किया तो चलते समय मार्ग में शुभ शकुन हुए अर्थात् सौभाग्यवती स्त्रियाँ सन्मुख मिलीं। कुछ और आगे चला तो क्या देखता है कि हजारों नर-नारी किसी स्थान को जा रहे हैं, पूछने से विदित हुआ कि वे सब अनन्तनाथ भगवान के समवसरण में वंदना के लिए जा रहे हैं।

यह जानकर यह ब्राह्मण भी उनके पीछे हो लिया और समवसरण में गया। वहाँ प्रभु की वंदना कर तीन प्रदक्षिणा दी और नर कोठे में यथास्थान जा बैठा, जहाँ समवसरण में दिव्यध्वनि सुनकर उसे सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हुई।

पश्चात् चारित्र का कथन सुनकर उसने जुआ, माँस, मद्य, वेश्यासेवन, शिकार, चोरी और परस्त्रीसेवन ये सात व्यसन त्याग किये। पंच उदुम्बर और तीन मकार त्याग ये अष्ट मूलगुण भी धारण किये। हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और अतिशय लाभ इन पंच पापों का एकदेश त्यागरूप अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत भी ग्रहण किये। इस प्रकार सम्यक्त्व सहित बारह व्रत लिए। पश्चात् कहने लगा –

हे नाथ! मेरी दरिद्रता किस प्रकार से मिटे सो कृपा करके कहिए।

तब भगवान ने उसे अनन्त चौदस का व्रत करने को कहा। इस व्रत की विधि इस प्रकार है कि भादों सुदी 11 का उपवास कर 12 और 13 को एकाशन करे अर्थात् एकाशन से मौन सहित स्वादरहित प्रासुक भोजन करे, सात प्रकार गृहस्थों के अन्तराय पाले, पश्चात् चतुर्दशी के दिन उपवास करे तथा चारों दिन ब्रह्मचर्य रखे, भूमि पर शयन करे, व्यापार आदि गृहारंभ न करे। मोहादि रागद्वेष तथा क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्यादिक कषायों को छोड़े, सोना, चाँदी या रेशम, सूत आदि का अनन्त बनाकर, इसमें प्रत्येक गाँठ पर 14 गुणों का चिन्तवन करके 14 गांठ लगाना।

प्रथम गाँठ पर ऋषभनाथ भगवान से अनन्तनाथ भगवान तक 14 तीर्थंकरों के नाम उच्चारण करे।

दूसरी गाँठ पर सिद्ध परमेष्ठी के 14 गुण चिन्तवन करे। तीसरी पर 14 मुनि जो मति, श्रुत, अवधिज्ञान युक्त हो गये हैं उनके नाम उच्चारण करे।

चौथी पर केवली भगवान के 14 अतिशय केवलज्ञान कृत स्मरण करे। पाँचवी पर जिनवाणी में जो 14 पूर्व हैं उनका चिन्तवन करे।

छठवीं पर चौदह गुणस्थानों का विचार करे। सातवीं पर चौदह मार्गणाओं का स्वरूप विचारे।

आठवीं पर 14 जीवसमासों का विचार करे, नवमीं पर गंगादि 14 नदियों का नामोच्चारण करे। दशवीं पर तीन लोक जो 14 राजू प्रमाण ऊँचा है उसका विचार करे।

ग्यारहवीं पर चक्रवर्ती के चौदह रत्नों का चिन्तवन करे। बारहवीं पर 14 स्वर (अक्षर) का चिन्तवन करे। तेरहवीं पर चौदह तिथियों का विचार करे। चौदहवीं गाँठ पर मुनि के मुख्य 14 दोष टालकर जो आहार लेते हैं, उनका विचार करे। इस प्रकार 14 गाँठ लगाकर मेरु के ऊपर स्थापित प्रतिमा के सन्मुख इस अनन्त को रखकर अभिषेक करे। अनन्त प्रभु की पूजन करे फिर नीचे लिखा मंत्र 108 बार जपे –

मंत्र – (1) ॐ ह्रीं अर्हं हं स अनन्तकेवलिने नमः।

मंत्र – (2) ॐ नमोऽर्हते भगवते अणंताणंतसिज्झधम्मे भगवदो महाविज्जा-महाविज्जा अणंताणंतकेवलिए अणंतकेवलणाणे अणंतकेवलदंसणे अणुपुज्जवासणे अणंते अणंतागमकेवली स्वाहा।

इस प्रकार चारों दिन अभिषेक, जप और जागरण, भजन, पूजनादि करे। फिर पूनम के दिन उस अनन्त को दाहिनी भुजा पर या गले में बांधे।

पश्चात् उत्तम, मध्यम या जघन्य पात्रों में से जो समय पर मिल सकें उन्हें आहार आदि दान देकर आप पारणा करे। इस प्रकार 14 वर्ष तक करे। पश्चात् उद्यापन करे, तब 14 प्रकार के उपकरण मंदिर में देवे जैसे-शास्त्र, चमर, छत्र, चौकी आदि। चार प्रकार संघों को आमंत्रण करके धर्म की प्रभावना करे। यदि उद्यापन की शक्ति न होवे तो दूना व्रत करे।

इस प्रकार श्रीमुख से व्रत की विधि और उत्तम फल सुनकर उन ब्राह्मण ने स्त्री सहित यह व्रत लिया तथा और भी बहुत लोगों ने यह व्रत लिया।

पश्चात् नमस्कार करके वह ब्राह्मण अपने ग्राम में आया और भाव सहित 14 वर्ष व्रत को विधियुक्त पालन करके उद्यापन किया। इससे दिनोंदिन उसकी बढ़ती होने लगी। इसके साथ रहने से और भी बहुत लोग धर्म-मार्ग में लग गये क्योंकि लोग जब उसकी इस प्रकार बढ़ती देखकर उससे इसका कारण पूछते तो वह अनन्त व्रत आदि व्रतों की महिमा और जिनभाषित धर्म के स्वरूप का कथन कह सुनाता। इससे बहुत लोगों की श्रद्धा उस पर हो जाती और वे उसे गुरु मानने लगते।

इस प्रकार वह ब्राह्मण भले प्रकार सांसारिक सुखों को भोगकर अन्त में सन्यास मरण कर स्वर्ग में देव हुआ। उसकी

स्त्री भी समाधि से मरकर उसी स्वर्ग में उसकी देवी हुई। वहाँ अपनी पूर्व-पर्याय का अवधि से विचारकर धर्मध्यान सेवन करके वहाँ से चये, सो वह ब्राह्मण का जीव अनन्तवीर्य नाम का राजा हुआ और ब्राह्मणी उसकी पट्टरानी हुई।

ये दोनों दीक्षा लेकर अनन्तवीर्य तो इसी भव से मोक्ष को प्राप्त हुए और श्रीमती स्त्रीलिंग छेदकर अच्युत स्वर्ग में देव हुई। वहाँ से चयकर मध्यलोक में मनुष्य भव धारण कर संयम ले मोक्ष जावेगी।

इस प्रकार एक दरिद्र ब्राह्मणी अनन्त व्रत पालकर सद्गति को पाकर उत्तमोत्तम गति को प्राप्त हुई। यदि अन्य भव्य जीव यह व्रत पालेंगे तो वे भी सद्गति पावेंगे।

(13)

रत्नत्रय व्रत विधि

रत्नत्रयं तु भाद्रपदचैत्रमाघशुक्लपक्षे च द्वादश्यां धारणं चैकभक्तं च त्रयोदश्यादिपूर्णिमान्तमष्टमं कार्यम्, तदभावे यथाशक्ति काञ्जिकादिकं, दिनवृद्धौ, तदधिकतया कार्यम्, दिनहानौ तु पूर्वदिनमारभ्य तदन्तं कार्यमिति पूर्वक्रमो ज्ञेयः।

अर्थ—रत्नत्रय व्रत भाद्रपद, चैत्र और माघ मास में किया जाता है। इन महीनों के शुक्लपक्ष में द्वादशी तिथि को व्रत धारण करना चाहिए तथा एकाशन करना चाहिए। त्रयोदशी, चतुर्दशी और पूर्णिमा का उपवास करना, तीन दिन का उपवास करने की शक्ति न हो तो कांजी आदि लेना चाहिए। रत्नत्रय व्रत के दिनों में किसी तिथि की वृद्धि हो तो एक दिन अधिक व्रत करना एवं एक तिथि की हानि होने पर एक दिन पहले से लेकर व्रत समाप्ति पर्यंत उपवास करना चाहिए। यहाँ पर भी तिथि हानि और तिथि वृद्धि में पूर्व क्रम ही समझना चाहिए।

विवेचन—रत्नत्रय व्रत के लिए सर्वप्रथम द्वादशी को शुद्ध भाव से स्नानादि क्रिया करके स्वच्छ सफेद वस्त्र धारण कर जिनेन्द्र भगवान का पूजन-अभिषेक करे। द्वादशी को इस व्रत की धारणा और प्रतिपदा को पारणा होती है। अतः द्वादशी को एकाशन के पश्चात् चारों प्रकार के आहार का त्याग कर, विकथा और कषायों का त्याग करे। त्रयोदशी, चतुर्दशी और पूर्णिमा को प्रोषध तथा प्रतिपदा को जिनाभिषेकादि के अनन्तर किसी अतिथि या किसी दुःखित-बुभुक्षित को भोजन कराकर एक बार आहार ग्रहण करे। अपने घर में ही अथवा चैत्यालय में जिनबिम्ब के निकट रत्नत्रय यंत्र की भी स्थापना करे।

द्वादशी से लेकर प्रतिपदा तक पाँचों ही दिनों को विशेषरूप से धर्मध्यानपूर्वक व्यतीत करें। प्रतिदिन त्रैकालिक सामायिक और रत्नत्रय विधान करना चाहिए। प्रतिदिन प्रातः, मध्यान्ह और सायंकाल में **'ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो नमः'** इस मंत्र का जाप करना चाहिए। इस व्रत को 13 वर्ष तक पालने के उपरांत उद्यापन कर देना चाहिए। यह व्रत की उत्कृष्ट विधि है, इतनी शक्ति न हो तो बेला करे तथा आठ वर्ष व्रत करके उद्यापन कर देना चाहिए। यह व्रत की मध्यम विधि है। यदि इस मध्यम विधि को सम्पन्न करने की भी शक्ति न हो तो त्रयोदशी और पूर्णिमा को एकाशन एवं चतुर्दशी को प्रोषध करना चाहिए। यह जघन्य विधि है, इस विधि से किये गये व्रत का तीन या पाँच वर्ष के बाद उद्यापन कर देना चाहिए। इस व्रत में पाँच दिन तक शीलव्रत का पालन करना आवश्यक है।

कथा—जम्बूद्वीप के विदेह क्षेत्र में कक्ष नाम का एक देश और वीतशोकपुर नाम का एक नगर है। वहाँ एक अत्यन्त पुण्यवान वैश्रवण नाम का राजा रहता था, जो कि पुत्रवत् अपनी प्रजा का पालन करता था।

एक दिन वह (वैश्रवण) राजा बसंत ऋतु में क्रीड़ा के निमित्त उद्यान में यत्र-तत्र सानंद विचर रहा था कि इतने ही में उसकी दृष्टि एक शिला पर विराजमान ध्यानस्थ श्री मुनिराज पर पड़ी। सो तुरंत ही हर्षित होकर वह राजा श्री मुनिराज के समीप आया और विनययुक्त नमस्कार करके बैठ गया। श्री मुनिराज जब ध्यान कर चुके तो उन्होंने धर्मवृद्धि कहकर आशीर्वाद दिया और इस प्रकार धर्मोपदेश देने लगे—

यह जीव अनादिकाल से मोहकर्मवश मिथ्या श्रद्धान, ज्ञान और आचरण करता हुआ पुनः-पुनः कर्मबंध करता और संसार में जन्म-मरणादि अनेक प्रकार दुःखों को भोगता है इसलिए जब तक इस रत्नत्रय (जो कि आत्मा का निज स्वभाव है) की प्राप्ति नहीं हो जाती तब तक यह (जीव) दुःखों से छूटकर निराकुलता स्वरूप सच्चे सुख व शांति की प्राप्ति नहीं हो सकती, जो कि वास्तव में इस जीव को हितकारी है। इसलिए भगवान ने "सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः" अर्थात् सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र को मोक्षमार्ग कहा है और सच्चा सुख मोक्ष अवस्था ही में मिलता है, इसलिए मोक्षमार्ग में प्रवृत्ति करना मुमुक्षु जीवों का परम कर्तव्य है।

(1) पुद्गलादि परद्रव्यों से भिन्न निज स्वरूप का श्रद्धान (स्वानुभव) तथा उसके कारणस्वरूप सप्त तत्त्वों और सत्यार्थ देव, गुरु व शास्त्र का श्रद्धान होना सो सम्यग्दर्शन है। यह सम्यग्दर्शन अष्ट अंग सहित और 25 मल दोष रहित धारण करना चाहिए अर्थात् जिन भगवान के कहे हुए वचनों में शंका नहीं करना, संसार के विषयों की अभिलाषा न करना, मुनि आदि साधर्मियों के मलिन शरीर को देखकर ग्लानि न करना,

धर्मगुरु के सत्यार्थ तत्त्वों की यथार्थ पहचान करना अर्थात् कुगुरु (रागीद्वेषी भेषी परिग्रही साधु गृहस्थ) कुदेव (रागीद्वेषी भयंकर देव) कुधर्म (हिंसापोषक क्रियाओं) की प्रशंसा भी न करना, धर्म पर लगते हुए मिथ्या आक्षेपों को दूर करना और अपनी बड़ाई व परनिंदा का त्याग करना, सम्यक् श्रद्धान और चारित्र से डिगते हुए प्राणियों को धर्मोपदेश तथा द्रव्यादि देकर किसी प्रकार स्थिर करना और धर्म और धर्मात्माओं में निष्कपट भाव से प्रेम करना और सर्वोपरि सर्व हितकारी श्री दिगम्बर जैनाचार्यों द्वारा बताये हुए श्री पवित्र जिनधर्म का यथार्थ प्रभाव सर्वोपरि प्रकट कर देना ये ही अष्ट अंग हैं।

इनसे विपरीत शंकादि आठ दोष, 1. जाति 2. कुल 3. बल 4. ऐश्वर्य 5. धन 6. रूप 7. विद्या और 8. तप इन आठ के आश्रित हो गर्व करना सो आठ मद, कुगुरु, कुदेव, कुधर्म और कुगुरु सेवक, कुदेव आराधक और कुधर्म धारक, ये छः अनायतन और देवमूढ़ता, लोकमूढ़ता पाखण्ड मूढ़ता इस प्रकार ये पच्चीस सम्यक्त्व के दूषण हैं। इससे सम्यक्त्व का एकदेश घात होता है इसलिए इन्हें त्याग देना चाहिए।

(2) पदार्थों के यथार्थ स्वरूप को संशय, विपर्यय व अनध्यवसाय आदि दोषों से रहित जानना सो सम्यग्ज्ञान है।

(3) आत्मा की निज परिणति (जो वीतराग रूप है) में ही रमण करता है अर्थात् रागद्वेषादि विभाव भावों, क्रोधादि कषायों से आत्मा को अलग करने व बचाने के लिए व्रत, संयम, तपादिक करना सो सम्यक्चारित्र है। इस प्रकार इस रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग को समझकर और उसे स्वशक्ति अनुसार धारण करके जो कोई भव्यजीव बाह्य तपाचरण धारण करता है वही सच्चे (मोक्ष) सुख को प्राप्त होता है।

इस प्रकार रत्नत्रय का स्वरूप कहकर अब बाह्य व्रत पालने की विधि कहते हैं–

भादो, माघ और चैत्र मास के शुक्ल पक्ष में, तेरस, चौदस और पूनम इस प्रकार तीन दिन यह व्रत किया जाता है और 12 को व्रत की धारणा तथा प्रतिपदा को पारणा किया जाता है अर्थात् 12 को श्री जिन भगवान की पूजनाभिषेक करके एकाशन (एकभुक्त) करे और फिर मध्यान्हकाल की सामायिक करके उसी समय से चारों प्रकार के (खाद्य, स्वाद्य, लेह्य और पेय) आहार तथा विकथाओं और सब प्रकार के आरंभों का त्याग करें। इस प्रकार तेरस, चौदस और पूनम तीन प्रोषध दिन (प्रोषध उपवास) करे और प्रतिपदा (पडवा) को श्री जिनदेव के अभिषेक पूजन के अनन्तर सामायिक करके तथा किसी अतिथि वा दुःखित–भूखित को भोजन कराकर भोजन करे, इस दिन भी एकभुक्त ही करना चाहिए।

इन व्रतों के पाँचों दिनों में समस्त सावद्य (पाप बढ़ाने वाले) आरंभ और विशेष परिग्रह का त्याग करके अपना समय सामायिक, पूजा, स्वाध्यायादि धर्मध्यान में बितावे। इस प्रकार यह व्रत 12 वर्ष तक करके पश्चात् उद्यापन करे और यदि उद्यापन की शक्ति न होवे तो दूना व्रत करे, यह उत्कृष्ट व्रत की विधि है।

यदि इतनी भी शक्ति न होवे तो बेला करे या कांजी आहार करे तथा आठ वर्ष करके उद्यापन करे यह मध्यम विधि है और जो इतनी शक्ति न होवे तो एकासना करके करे और तीन ही वर्ष या पाँच वर्ष तक करके उद्यापन करे, यह जघन्य विधि है। सो स्वशक्ति अनुसार व्रत धारण कर पालन करे। नित्य प्रतिदिन में त्रिकाल सामायिक तथा रत्नत्रय पूजन विधान करे और तीन बार इस व्रत का जाप्य जपे अर्थात् **'ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो नमः'**, इस मंत्र की 108 बार जाप जपे, तब एक जाप्य होती है।

इस प्रकार व्रत पूर्ण होने पर उद्यापन करे अर्थात् श्री जिनमंदिर में जाकर महोत्सव करे। छत्र, चमर, झारी, कलश, दर्पण, पंखा, ध्वजा और ठमनी आदि मंगल द्रव्य चढ़ावे, चन्दोवा बंधावे और कम से कम तीन शास्त्र मंदिर में पधरावे, प्रतिष्ठा करे, उद्यापन के हर्ष में विद्यादान करे, पाठशाला, छात्रावास, अनाथालय, पुस्तकालय आदि संस्थाएं ध्रौव्यरूप से स्थापित करे और निरन्तर रत्नत्रय की भावना भाता रहे।

इस प्रकार श्री मुनिराज ने राजा वैश्रवण को उपदेश दिया सो राजा ने सुनकर श्रद्धापूर्वक इस व्रत को यथाविधि पालन कर किया, पूर्ण अवधि होने पर उत्साह सहित उद्यापन किया।

पश्चात् एक दिन वह राजा एक बहुत बड़े बड़ के वृक्ष को जड़ से उखड़ा हुआ देखकर वैराग्य को प्राप्त हुआ और दीक्षा लेकर अंत समय समाधिमरण कर अपराजित नामक विमान में अहमिन्द्र हुआ और फिर वहाँ से चयकर मिथिलापुरी में महाराजा कुंभराय के यहाँ, सुप्रभावती रानी के गर्भ से मल्लिनाथ तीर्थंकर हुए सो पंचकल्याणक को प्राप्त होकर अनेक भव्य जीवों को मोक्षमार्ग में लगाकर आप परम धाम (मोक्ष) को प्राप्त हुए।

इस प्रकार वैश्रवण राजा ने व्रत पालन कर स्वर्ग के, मनुष्यों के सुख को प्राप्त कर मोक्षपद प्राप्त किया और सदा के लिए जन्म-मरणादि दुखों से छुटकारा पाकर अविनाशी स्वाधीन सुखों को प्राप्त हुए। इसलिए जो नर-नारी मन, वचन, काय से इस व्रत की भावना भाते हैं अर्थात् रत्नत्रय को धारण करते हैं, वे भी राजा वैश्रवण के समान स्वर्गादि मोक्षसुख को प्राप्त होते हैं।

दश धर्म महत्व

–गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी

सिद्धिप्रासादनिःश्रेणी-पंक्तिवत् भव्यदेहिनाम्।
दशलक्षणधर्मोऽयं, नित्यं चित्तं पुनातु नः।।1।।

भव्य जीवों के सिद्धिमहल पर चढ़ने के लिये सीढ़ियों की पंक्ति के समान यह दशलक्षणमय धर्म नित्य ही हम लोगों के चित्त को पवित्र करें।

उत्तम क्षमा धर्म

सर्वं यो सहते नित्यं क्षमादेवीमुपास्य सः।
पार्श्ववत् जायते जित्वोपसर्गांश्च परीषहान्।।1।।

शांतिः किं स्यात्क्रुधा किं नु नश्येत् वैरं हि वैरतः।
रक्तेन रञ्जितं वस्त्रं, किं रजसा विशुद्ध्यति।।2।।

अपकर्त्रे हि कोपश्चेत्, किं न कोपाय कुप्यसि।
क्रोधोऽयं ते महाशत्रुर्लोकद्वयविनाशकृत।।3।।

मुनयः पांडवाद्याश्च प्राणहारिरिपूनपि।
क्षान्त्वा सर्वंसहाः सिद्धा जातास्तेभ्यो नमोऽस्तु मे।।4।।

द्रव्यं भावं द्विधा क्रोधं भित्वाहं स्वात्मचिंतनात्।
उत्तमक्षांतियुक्स्वात्मज्ञानं लप्स्ये सुखं ध्रुवम्।।5।।

जो क्षमा देवी की उपासना करके हमेशा सभी कुछ सहन कर लेता है वह उपसर्गों और परीषहों को जीतकर पार्श्वनाथ तीर्थंकर के सदृश महान हो जाता है। क्या क्रोध से शांति हो सकती है ? क्या बैर से बैर का नाश हो सकता है ? क्या खून से रंगा हुआ वस्त्र खून से ही साफ हो सकता है ? यदि अपकार करने वाले के प्रति तुझे क्रोध आता है तो फिर तू क्रोध पर ही क्रोध क्यों नहीं करता है ? क्योंकि यह क्रोध तो तेरे दोनों लोकों को विनाश करने वाला महाशत्रु है। पांडव, गजकुमार आदि महामुनि अपने प्राणों का घात करने वाले महाशत्रुओं को भी क्षमा करके 'सर्वंसह' सिद्ध हो गये हैं उनको मेरा नमस्कार होवे। द्रव्य और भाव इन दो प्रकार के क्रोध को मैं अपने आत्मचिन्तन के बल से भेदन करके उत्तम क्षमा से युक्त अपने ज्ञान और सौख्य को निश्चित रूप से प्राप्त करूँगा, हमेशा ऐसी भावना भाते रहना चाहिये।।1–5।।

उत्तम मार्दव धर्म

मार्दवः स्यान्मृदोर्भावो, मानशत्रोर्विमर्दकः।
चतुर्धा विनयोपेतो, वर्जितः सोऽष्टभिर्मदैः।।1।।

इन्द्रवत् खग इन्द्राख्यो, रावणेन विनिर्जितः।
रावणोऽपि स्वयं नष्टः, किं मानेन प्रयोजनम्।।2।।

उच्चं नीचं धृतं सर्वं, पर्यायं भुवने मया।
इन्द्रसौख्यमवाप्तं हा! निगोदेष्वपि दुःखितः।।3।।

चक्रभृत् भरतेशोऽपि, वृषभाद्रिं व्यलोकयत्।
स्फेटयित्वाक्षरं तत्र, स्वप्रशस्तिं लिलेख सः।।4।।

स्वात्मगुणस्य सन्मानैः स्वात्मानंदामृतं स्वदे।
स्वाभिमाने पदे स्थित्वा ज्ञानादिगुणमाप्नुयाम्।।5।।

मृदु का भाव मार्दव है, यह मार्दव मानशत्रु का मर्दन करने वाला है, यह आठ प्रकार के मद से रहित है और चार प्रकार की विनय से संयुक्त है। देखो, इन्द्र नाम का विद्याधर इन्द्र के समान वैभवशाली था फिर भी रावण के द्वारा पराजय को प्राप्त हुआ है और वह रावण भी एक दिन मान के वश में नष्ट हो गया, अतः मान से क्या लाभ है ? मैंने इस संसार में ऊँच और नीच सभी पर्यायें धारण की हैं। अहो! मैंने इन्द्रों के सुख भी प्राप्त किये हैं और हा! खेद है कि निगोद पर्याय में दुःख भी प्राप्त किये गये हैं। देखो, चक्ररत्न को धारण करने वाले भरत चक्रवर्ती भी वृषभाचल पर्वत को देखता है पुनः उस पर से अक्षर को मिटाकर वह अपनी प्रशस्ति को लिखता है। अपने आत्मगुणों के सन्मान से अपने आत्मा के आनन्दरूपी अमृत को चखना चाहता हूँ। अपने स्वाभिमानमय पद में स्थित होकर मैं ज्ञानादिगुण को प्राप्त कर लूँ, मेरी यही भावना है, प्रत्येक व्यक्ति को ऐसी भावना सदा भाते रहना चाहिये।।1–5।।

आर्जवः स्यादृजोर्भावः त्रियोगं सरलं कुरु।
तिर्यग्योनिर्भवेल्लोके माययानंतकष्टदा।।1।।

छद्मतः सगरो राजाऽवमेने मधुपिंगलः।
सोऽपि कालासुरो भूत्वा हिंसायज्ञमकारयत्।।2।।

साधुर्मृदुमतिः छद्मभावात् हस्ती बभूव च।
धिक् धिक् मायामहादेवीं यत्प्रसादाद् भुवि भ्रमेत्।।3।।

ऊर्ध्वगः ऋजुभावेन कौटिल्येन चतुर्गतिः।
यत्ते रोचेत तत्कुर्याः किमन्यैर्बहुजल्पनैः।।4।।

विश्वासं परतः त्यक्त्वा, स्थित्वा स्वस्मिन् स्वयं स्वतः।
त्रियोगमचलं कृत्वा स्वकं रत्नत्रयं लभे।।5।।

उत्तम आर्जव धर्म

ऋजु अर्थात् सरलता का भाव आर्जव है, अर्थात् मन-वचन-काय को कुटिल नहीं करना। इस मायाचारी से अनंतों कष्टों को देने वाली तिर्यंच योनि मिलती है। सगर राजा ने सुलसा से स्वयंवर में मायाचारी से मधुपिंगल का अपमान किया था। पुनः वह मधुपिंगल मरकर 'काल' नाम का असुर देव हो गया और उसने द्वेष में आकर हिंसामयी यज्ञ को चला दिया। मृदुमति नाम के मुनि ने मायाचारी की, जिसके फलस्वरूप वह त्रिलोकमंडन हाथी हो गया। इसलिये इस माया नाम की महादेवी को धिक्कार हो! धिक्कार हो! कि जिसके प्रसाद से यह जीव संसार में परिभ्रमण करता है। सरल भाव से ऊर्ध्वगति होती है। इसका अर्थ यह भी है कि ऋजुगति से जीव मोक्ष गमन करता है और कुटिलता से चारों गतियों में अर्थात् वक्रगति में संसार में भ्रमण करता है। अतः बहुत अधिक कहने से क्या इसमें से तुझे जो रुचता है सो कर। पर वस्तु से विश्वास को त्याग कर मैं अपने में आप स्वयं स्थित होकर मन-वचन-काय को स्थित करके अपने रत्नत्रय को प्राप्त करूँगा, ऐसी भावना प्रतिदिन भाते रहना चाहिये।।1–5।।

उत्तम शौच धर्म

शुचेर्भावो भवेत् शौचमन्तर्लोभो निवार्यताम्।
या निर्लोभवती देवी त्वया नित्यमुपास्यताम्।।1।।

कामधेनुं ऋषिं हत्वा कृतवीरोऽहरत् ततः।
जघानैकविंशतिशः क्षत्रियान् जमदग्निजः।।2।।

देहीति वाक्यतो नूनं, नाऽप्यणुवल्लघुर्भवेत्।
दाता गगनवल्लोके, विशालः स्याच्च कीर्तिमान्।।3।।

जलाद्यैर्बाह्यशुद्धिं च, कुर्वंति श्रावकाः सदा।
स्वात्मशुद्धिं च कुर्वंति साधवो ब्रह्मचारिणः।।4।।

ज्ञानामृतैरहं शश्वदात्मकर्ममलं नुदन्।
स्वयं शौचगुणैः लप्स्ये स्वात्मसौख्यामृतं शुचि।।5।।

शुचि—पवित्रता का भाव शौच है अर्थात् अंतरंग के लोभ को दूर कीजिये और जो निर्लोभवती देवी है उसकी नित्य ही उपासना कीजिये। राजा कृतवीर ने जमदग्नि ऋषि को मारकर उसकी कामधेनु का अपहरण कर लिया। तब ऋषि पुत्र परशुराम ने भी क्रुद्ध होकर इक्कीस बार राजवंश को समूल नष्ट कर दिया। 'देहि' अर्थात् देओ! इस वाक्य से निश्चित ही वह मनुष्य अणु के समान लघु हो जाता है और देने वाला दाता लोक में आकाश के समान विशाल और कीर्तिमान हो जाता है। श्रावक हमेशा जल आदि से बाह्य शुद्धि करते हैं और साधुगण तथा ब्रह्मचारी जन आत्म शुद्धि करते हैं। मैं ज्ञानरूपी अमृत से हमेशा आत्मा के कर्म मल को दूर करते हुए स्वयं शौच गुणों से पवित्र अपनी आत्मा के सुखरूपी अमृत को प्राप्त करूँगा, प्रत्येक व्यक्ति को हमेशा ऐसी भावना करते रहना चाहिये।।1–5।।

उत्तम सत्य धर्म

सत् सम्यक् च प्रशस्तं स्यात् सत्यं पीयूषभृद् वचः।
मिथ्यापलापकं वाक्यं धर्मशून्यं सदा त्यज।।1।।

गर्हितं निंदितं हिंसापैशून्याप्रियकर्कशं।।
आक्रोशक्रोधवैरादिसावद्योत्सूत्रकं त्यजेः।।2।।

मंत्री श्रीवंदकोऽसत्यैर्वाक्यै र्दृग्भ्यां च्युतः क्षणात्।
वसुराजाप्यसत्पक्षात् सप्तमं नरकं गतः।।3।।

सत्यं प्रियं हितं वाक्यं सुंदरं सर्वसिद्धिदं।
विश्वासघातवल्लोके महापापं न वर्तते।।4।।

स्वस्मात् भिन्नं परद्रव्यं मा कुर्वात्मन्! स्वकीयकम्।
सम्यक् स्वस्मिन् स्वकं ध्यात्वा, स्वात्माल्हादं सुखं भज।।5।।

सत् अर्थात् समीचीन और प्रशस्त वचन सत्य कहलाते हैं। ये वचन अमृत से भरे हुये हैं। मिथ्या अपलाप करने वाले और धर्मशून्य वचन सदा छोड़ो। गर्हित, निंदित, हिंसा, चुगली, अप्रिय, कठोर, गाली-गलौच, क्रोध, बैर आदि के वचन, सावद्य के वचन और आगम विरुद्ध वचन इन सबको छोड़ो। देखो! श्रीवंदक नाम बौद्ध मंत्री असत्य वचनों के द्वारा क्षण मात्र में आँखों से अंधा हो गया। वसु राजा भी असत्य के पक्ष में सातवें नरक में चला गया। सत्य, प्रिय, हितकर और सुन्दर वचन सर्वसिद्धि को देने वाले हैं। इस लोक में विश्वासघात के समान महापाप कोई नहीं है। हे आत्मन्! अपने से भिन्न परद्रव्य को अपना मत बनाओ और अपने में अपने को अच्छी तरह से ध्याकर अपनी आत्मा के आह्लादमय सुख को प्राप्त करो, ऐसी भावना सतत भाते रहना चाहिये।।1–5।।

उत्तम संयम धर्म

प्राणीन्द्रियैर्द्विधा प्रोक्तः, संयमः संयतैः जनैः।
षट्कायजीवरक्षा स्यात् पंचेन्द्रियमनोजयः।।1।।

जीवानां संकुले लोके, कुर्वे ह्याचरणं कथम्।
भाषे भुंजे कथं स्वामिन्! यतो पापं न बध्यते।।2।।

यत्नादाचरणं कुर्याः, यत्नात् भाषण भोजनम्।
यत्नात् सर्वां क्रियां कृत्वा त्वया पापं न बध्यते।।3।।

एकव्रतयुतं शत्रुं सीताचरोऽपि रावणम्।
सम्यक्त्वं ग्रहयित्वा सोऽकार्षीत् वैरविमोचनम्।।4।।
संयम्येंद्रियचेतोऽहं वाञ्छामि स्वात्मनि स्थितिं।
कर्म कर्मफलं भुंजन, मनाक् खेदमनाप्नुयाम्।।5।।

संयत मुनियों में प्राणी संयम और इन्द्रिय संयम की अपेक्षा दो भेद हैं। पाँच स्थावर और त्रस ऐसे षट्काय जीवों की रक्षा करना प्राणी संयम है और पाँच इन्द्रियों तथा मन का जय करना इन्द्रिय संयम है। हे भगवन्! जीवों से ठसाठस भरे हुये इस संसार में मैं कैसे प्रवृत्ति करूँ ? कैसे बोलूँ ? और कैसे भोजन करूँ ? कि जिससे पाप का बन्ध नहीं होवे। इस प्रकार से प्रश्न होने पर आचार्य कहते हैं कि यत्नपूर्वक आचरण करो, यत्नपूर्वक भाषण और भोजन करो तथा यत्नपूर्वक संपूर्ण क्रिया करने से तुम्हें पाप का बन्ध नहीं होगा। देखो! सीता का जीव जब अच्युतेन्द्र हुआ तब 'एक व्रत को धारण करने से रावण मेरे साथ बलात्कार करने के लिये प्रयत्नशील नहीं हुआ' ऐसा सोचकर वह अच्युतेन्द्र नरक में जाकर रावण को सम्यक्त्व ग्रहण कराकर वैर का त्याग कर देता है। मैं सर्व इन्द्रिय और मन को नियन्त्रित करके अपनी आत्मा में स्थित करना चाहता हूँ कि जिससे कर्म और कर्म के फल को भोगता हुआ किंचित् मात्र खेद को न प्राप्त होऊँ, प्रतिदिन ऐसी भावना भाते रहना चाहिये।।1–5।।

उत्तम तप धर्म

तपो द्वादशधा प्रोक्तं, बाह्याभ्यंतरसंयुतम्।
बाह्यमनशनादि स्यात्, प्रायश्चित्तादि चांतरम्।।1।।
सम्यक् तपांसि रुन्ध्दंति, पतनं भववारिधौ।
कायं कृष्ट्वा समाप्नोति नरोऽनंतबलं सुखम्।।2।।
मयनाममुनीशं सा स्पृष्ट्वा सिंहेन्दुकं पतिं।
अस्प्राक्षीत् तत्क्षणं सोऽपि, निर्विषस्तमपूजयत्।।3।।
तपोभिर्दीप्ततप्ताद्याः ऋद्धयः प्रभवन्त्यरम्।
निस्पृहा अपि ते सन्तः कथ्यन्तेऽत्र तपोधनाः।।4।।
इच्छां सर्वां निरुध्याशु, तप्त्वा सम्यक् तपः स्वयं।
ध्यानाग्नौ कर्मकाष्ठानि क्षिप्त्वा शुद्धो भवाम्यहम्।।5।।

तप के बाह्य और आभ्यंतर से युक्त बारह भेद कहे गये हैं। अनशन, अवमौदर्य, वृत्तपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्त शयनासन और कायक्लेश ये छह बाह्य तप हैं और प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग तथा ध्यान ये छह अंतरंग तप हैं। सम्यक् तप जीव के संसार समुद्र में पतन को रोक लेते हैं। मनुष्य काय को कृश करके अपने अनंतबल और सुख को प्राप्त कर लेता है। एक रानी ने मय नाम के ऋद्धियुक्त मुनि का स्पर्श करके विष से मूर्छित अपने पति राजा सिंहेंदु का स्पर्श किया तो उसी क्षण वे निर्विष हो गये पुनः उन मुनि की पूजा की। तप के प्रभाव से दीप्त तप, तप्ततप आदि ऋद्धियाँ प्रगट हो जाती हैं फिर भी वे साधु उनसे निस्पृह रहते हैं अतः वे 'तपोधन' इस सार्थक नाम से पुकारे जाते हैं। संपूर्ण इच्छाओं का निरोध करके मैं सम्यक् तप को तपकर ध्यानरूपी अग्नि में कर्म ईंधन को डालकर शुद्ध हो जाऊँगा, ऐसी भावना से ही कर्म नष्ट होते हैं।।1–5।।

उत्तम त्याग धर्म

रत्नत्रयस्य दानं स प्रासुक त्याग उच्यते।
चतुर्धा दानमप्यार्षात् त्रिधा पात्राय दीयते।।1।।
वज्रजंघो नृपो राज्ञया श्रीमत्या सह कानने।
भुक्तिं ददौ मुनिभ्यां स तीर्थेशो वृषभोऽभवत्।।2।।
भूत्वा श्रीमत्यपि श्रेयान् दानतीर्थ प्रवर्तकः।
श्रीकृष्ण औषधेर्दानात् पुण्यभाक् भावितीर्थकृत्।।3।।
सच्छास्त्रदानतो गोपः कौंडेशः श्रुतपारगः।
वसते र्दानमाहात्म्यात् घृष्टिः स्वर्गतिमाप्तवान्।।4।।
रत्नत्रयमहं दत्वा स्वस्मै सर्वगुणात्मकं।
स्वात्मतत्त्वं लभेयाशु स्वस्मिन्नेव लयं पुनः।।5।।

'रत्नत्रय का दान देना वह प्रासुक त्याग कहलाता है और तीन प्रकार के पात्रों के लिए चार प्रकार दान देना भी त्याग है' ऐसा आर्ष में कहा है। राजा वज्रजंघ ने रानी श्रीमती के साथ वन में युगल मुनि को आहारदान दिया था, जिसके फलस्वरूप वे वृषभ तीर्थंकर हुए हैं तथा उनकी रानी श्रीमती भी उसी के प्रभाव से आगे राजा श्रेयांस होकर दानतीर्थ के प्रवर्तक हुए हैं। श्रीकृष्ण ने एक मुनि को औषधिदान दिया था, जिससे वे भविष्य में पुण्य के स्थान ऐसे तीर्थंकर होवेंगे। सच्चे शास्त्र के दान से एक ग्वाला अगले भव में कौंडेश मुनि होकर श्रुतज्ञानी हुआ। वसतिका के दान के प्रभाव से सूकर ने स्वर्ग को प्राप्त कर लिया। मैं भी रत्नत्रय का दान अपने को देकर सर्वगुणों से परिपूर्ण स्वात्म तत्त्व को शीघ्र ही प्राप्त कर लेऊँ और उसी में लीन हो जाऊँ, ऐसी भावना प्रत्येक व्यक्ति को भाते रहना चाहिए।।1–5।।

उत्तम आकिंचन्य धर्म

अकिञ्चनो न मे किंचित् आत्मानंत गुणात्मकः।
परद्रव्यात् सदा भिन्नस्त्रैलोक्याधिपतिर्महान्।।1।।
अणुमात्रं परं स्वस्य, मत्वा जीवो भवे भ्रमेत्।
कायेऽपि निर्ममो भूयात् लोकाग्रे निवसेत्तदा।।2।।

जमदग्निमुनिर्मिथ्यातापसोऽभूत् परिग्रही।
भवाब्धौ पतितो दीर्घभारैः स्यात्कथमूर्ध्वगः।।3।।

पिच्छि कमंडलु शास्त्रं गृण्हाति देहनिः स्पृहः।
आतापनादियोगेषु तिष्ठेत् स्वात्मैक्यसंगतः।।4।।

भगवन्। त्वत्प्रसादान्मे शक्तिः प्रादुर्भवेत्त्वरम्।
गिरिकंदर दुर्गेषु स्वं ध्यायन, सिद्धि माप्नुयाम्।।5।।

'न मे किञ्चन अकिञ्चनः' मेरा कुछ भी नहीं है अतः मैं अकिञ्चन हूँ। फिर भी मेरी आत्मा अनंतगुणों से परिपूर्ण है। मैं सदा परद्रव्य से भिन्न हूँ और तीन लोक का अधिपति महान् हूँ। यह अणुमात्र भी परवस्तु को जब तक अपनी मानता रहता है तब तक संसार में भ्रमण करता रहता है और जब काय से भी निर्मम हो जाता है तब लोक के अग्रभाग में विराजमान हो जाता है। जमदग्नि मुनि ने मिथ्यातापसी होकर स्त्री आदि का परिग्रह स्वीकार कर लिया अतः वह संसार समुद्र में डूब गया। सच है, दीर्घ भार लेकर मनुष्य ऊपर कैसे गमन कर सकता है ? शरीर से भी निःस्पृह हुए साधु पिच्छी, कमण्डलु और शास्त्र को ग्रहण करते हैं फिर भी अपनी आत्मा में एकाग्र होते हुए आतापन आदि योगों में स्थित हो जाते हैं। हे भगवन्! आपके प्रसाद से शीघ्र ही मुझ में ऐसी शक्ति उत्पन्न हो जावे, कि मैं पर्वत पर, कन्दराओं में और दुर्ग आदि प्रदेशों में अपनी आत्मा का ध्यान करते हुए सिद्धि पद को प्राप्त कर लेऊँ, ऐसी भावना सदा भाते रहना चाहिए।।1–5।।

उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म

आत्मैव ब्रह्म तस्मिन् स्यात् चर्येति ब्रह्मचर्यभाक्।
वासो वा गुरूसंघेऽपि ब्रह्मचारी स उत्तमः।।1।।

एकमंकं विनाऽसंख्यविंदूनां गणना नु का ?
ऋते ब्रह्मव्रताल्लोकेऽन्यव्रतानां फलं कुतः ?।।2।।

अभुक्त्वापि परित्यक्तं विश्वमुच्छिष्टवत् पुरा।
यैस्तान्नमामि भवत्याहं कौमारब्रह्मचारिणः।।3।।

अणुब्रह्मव्रती श्रेष्ठी यशस्वीह सुदर्शनः।
सीतायाः शीलमाहात्म्यात् अग्निर्वारिसरोऽभवत्।।4।।

स्वब्रह्मणि रमित्वाहं हित्वा सर्वान् विकल्पकान्।
लब्ध्वा ज्ञानवतीं लक्ष्मीं भविष्यामि जगत्पतिः।।5।।

'आत्मा ही ब्रह्म है उस ब्रह्मस्वरूप आत्मा में चर्या करना सो ब्रह्मचर्य है अथवा गुरु के संघ में रहना भी ब्रह्मचर्य है। इस विधचर्या को करने वाला उत्तम ब्रह्मचारी कहलाता है। जिस प्रकार से एक (1) अंक को रखे बिना असंख्य बिन्दु भी रखते जाइये, किन्तु क्या कुछ संख्या बन सकती है ? नहीं, उसी प्रकार से एक ब्रह्मचर्य के बिना अन्य व्रतों का फल कैसे मिल सकता है अर्थात् नहीं मिल सकता। पहले बिना भोगे भी जिन्होंने इस विश्व को उच्छिष्ट के सदृश समझकर छोड़ दिया है, मैं उन बाल ब्रह्मचारियों को नमस्कार करता हूँ। देखो! सुदर्शन सेठ ने ब्रह्मचर्याणुव्रत का ही पालन किया था, फिर भी वे आज तक यशस्वी हैं। सीता के शील के माहात्म्य से अग्नि भी जल का सरोवर हो गई थी। मैं भी सर्व विकल्पों को छोड़कर अपने ब्रह्मस्वरूप आत्मा में रमण करके ज्ञानवती लक्ष्मी को प्राप्त करके पुनः निश्चिंत हो तीन लोक का स्वामी हो जाऊँगा, ऐसी भावना सतत करनी चाहिए।।1–5।।

दश धर्म एक कल्पवृक्ष है

क्षमामूलं मृदुत्वं स्यात्, स्कंध शाखाः सदार्जवम्।
शौचं कं सत्यपत्राणि, पुष्पाणि संयमस्तपः।।1।।

त्यागश्चाकिञ्चनो ब्रह्म मंजरी सुमनोहरा।
धर्मकल्पद्रुमश्चैष दत्ते श्वश्च शिवं फलम्।।2।।

धर्मकल्पतरो! त्वाहं समुपास्य पुनः पुनः।
ज्ञानवत्या श्रिया युक्तं, याचे मुक्त्यैकसत्फलम्।।3।।

क्षमा जिसकी जड़ है, मृदुता स्कंध है, आर्जव शाखाएँ हैं, उसको सिंचित करने वाला शौचधर्म जल है, सत्यधर्म पत्ते हैं, संयम, तप और त्याग रूप पुष्प खिल रहे हैं, आकिञ्चन और ब्रह्मचर्य धर्मरूप सुन्दर मंजरियाँ निकल आई हैं। ऐसा यह धर्मरूप कल्पवृक्ष स्वर्ग और मोक्षरूप फल को देता है। हे धर्मकल्पतरो! मैं तुम्हारी पुनः-पुनः उपासना करके तुमसे ज्ञानवती लक्ष्मी से युक्त मुक्तिरूप एक सर्वोत्कृष्ट फल की ही याचना करता हूँ।।1 से 3।।

क्षमावणी

पर्यूषण पर्व का प्रारंभ भी क्षमाधर्म से होता है और समापन भी क्षमावणी पर्व से किया जाता है। दश दिन धर्मों की पूजा करके, जाप्य करके जो परिणाम निर्मल किये जाते हैं और दश धर्मों का उपदेश श्रवण कर जो आत्म शोधन होता है, उसी के फलस्वरूप सभी श्रावक-श्राविकाएँ किसी भी निमित्त परस्पर में होने वाली मनोमलिनता को दूरकर आपस में क्षमा कराते हैं। क्योंकि यह क्रोध कषाय प्रत्यक्ष में ही अग्नि के समान भयंकर है। क्रोध आते ही मनुष्य का चेहरा लाल हो जाता है। ओंठ काँपने लगते हैं, मुखमुद्रा विकृत और भयंकर हो जाती है। किन्तु प्रसन्नता में मुख मुद्रा सौम्य, सुन्दर दिखती है। चेहरे पर शांति

दिखती है। वास्तव में शांत भाव का आश्रय लेने वाले महामुनियों को देखकर जन्मजात बैरी ऐसे क्रूर पशुगण भी क्रूरता छोड़ देते हैं। यथा—

सारंगी सिंहशावं स्पृशति सुतधिया नंदिनी व्याघ्र पोतं।
मार्जारी हंसबालं प्रणयपरवशा केकिकांता भुजंगीम्।।
वैराण्याजन्मजातान्यपि गलितमदा जंतवोऽन्ये त्यजंति।
श्रित्वा साम्यैकरूढं प्रशमितकलुषं योगिनं क्षीणमोहम्।।

हरिणी सिंह के बच्चे को पुत्र की बुद्धि से स्पर्श करती है, गाय व्याघ्र के बच्चे को दूध पिलाती है, बिल्ली हंसों के बच्चों को प्रीति से लालन करती है एवं मयूरी सर्पों को प्यार करने लगती है। इस प्रकार से जन्मजात भी बैर को क्रूर जंतुगण छोड़ देते हैं। कब ? जबकि वे पापों को शांत करने वाले मोहरहित और समताभाव में परिणत ऐसे योगियों का आश्रय पा लेते हैं अर्थात् ऐसे महामुनियों के प्रभाव से हिंसक पशु अपनी द्वेष भावना छोड़कर आपस में प्रीति करने लगते हैं। ऐसी शांत भावना का अभ्यास इस क्षमा के अवलंबन से ही होता है।

क्रोध कषाय को दूर कर इस क्षमाभाव को हृदय में धारण करने के लिए भगवान् पार्श्वनाथ का चरित्र, श्री संजयंत मुनि का चरित और तुंकारी की कथाएँ पढ़नी चाहिए तथा क्षमाशील साधु पुरुषों का आदर्श जीवन देखना चाहिए। आचार्य शांतिसागर जी आदि साधुओं ने इस युग में भी उपसर्ग करने वालों पर क्षमा भाव धारण करके सदैव प्राचीन आदर्श प्रस्तुत किया है। बहुत से श्रावक भी क्षमा करके-कराके अपने में अपूर्व आनंद का अनुभव करते हैं। अतः हृदय से क्षमा करना तथा दूसरों से क्षमा कराना ही क्षमावणी पर्व है।

Ṇamokar Mahamantra And Chattari Mangal

-Ganini Gyanmati Mataji

Ṇamo Arihantaṇam
Ṇamo Siddhaṇam
Ṇamo Aairiyaṇam
Ṇamo Uvajjhayaṇam
Ṇamo Loe Savva Sahuṇam

Chattari Mangalam—Arihant Manglam, Siddh Manglam, Sahu Manglam, Kevli Paṇṇatto Dhammo Manglam.

Chattari Loguttama—Arihant Loguttama, Siddh Loguttama, Sahu Loguttama, Kevli Paṇṇatto Dhammo Loguttama.

Chattari Sarṇam Pavvajami—Arihant Sarṇam Pavvajami, Siddh Sarṇam Pavvajami, Sahu Sarṇam Pavvajami, Kevli Paṇṇatto Dhammo Sarṇam Pavvajami.

The above Ṇamokar Mahamantra and Chattari Mangal are eternal.

Now-a-days, a new tradition has been established somehow for reading Chattari Mangal as below—

Chattari Mangalm-Arihanta Manglam....Arihanta Loguttama.....Arihante sarṇam Pavvajami.

This new Chattari Mangal has started since about 1974, where Arihant is pronounced as Arihanta, Siddh is pronounced as Siddha and Kevli Paṇṇato Dhammo Manglam as Kevli Paṇṇattam Dhammam Manglam and so on.

In ancient Jain Scriptures like Gyanarṇav, Pratishtha Tilak, Pratishtha Path, Hand-written 'Shri Vasunandi Pratishtha Path Sangrah', Pratishthasaroddhar, Kriyakalap, Samayik Bhashya etc., the above-written Chattari Mangal (without *Vibhakti)* has been mentioned, so we should always recite the old Chattari Mangal.

(Translated Version by—Aryika Swarnmati-Sanghasth)

सोलहकारण पूजा

-आर्यिका चन्दनामती

तर्ज –अब ना छुपाऊँगा.....

दर्शनविशुद्धि हो, आतम की शुद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके, इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा-2।।टेक.।।
जो सोलह भावना भाते, वे तीर्थंकर बन जाते।।
केवलि श्रुतकेवलि पद में, ऐसे स्वर्णिम क्षण मिलते।।
भावों की शुद्धि हो, निजगुण की वृद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा।।1।।

आह्वानन स्थापन है, पूजन का सन्निधापन है।।
पुष्पांजली समर्पण है, प्रभु चरणों में वन्दन है।।
भावों की शुद्धि हो, निजगुण की वृद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा।।2।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधीकरणं।

–अष्टक –

दर्शन विशुद्धि हो, आतम की शुद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा-2।।टेक.।।
जल का स्वर्ण कलश लेकर, धार करूँ तीर्थंकर पद।
जन्म जरा मृत्यु क्षय हों, मानव जीवन सुखमय हो।।
भावों की शुद्धि हो, निजगुण की वृद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा।।1।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यः जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन विशुद्धि हो, आतम की शुद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा-2।।टेक.।।
शुद्ध सुगंधित केशर ले, जिनवर पद में चर्चूं मैं।
भव आताप मेरा क्षय हो, मानव जीवन सुखमय हो।।
भावों की शुद्धि हो, निजगुण की वृद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा।।2।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन विशुद्धि हो, आतम की शुद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा-2।।टेक.।।
मोती सम अक्षत लेकर, पुंज धरूँ मैं जिनवर पद।
मम आतम सुख अक्षय हो, मानव जीवन सुखमय हो।।
भावों की शुद्धि हो, निजगुण की वृद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा।।3।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन विशुद्धि हो, आतम की शुद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा-2।।टेक.।।
कुंद कमल पुष्पों को ले, जिनवर सम्मुख अर्पूं मैं।
मेरी काम व्यथा क्षय हो, मानव जीवन सुखमय हो।।
भावों की शुद्धि हो, निजगुण की वृद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा।।4।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन विशुद्धि हो, आतम की शुद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,

आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा-2।।टेक.।।
खाजे पूरनपोली ले, प्रभु पूजन में चढ़ाऊँ मैं।
मेरा रोग क्षुधा क्षय हो, मानव जीवन सुखमय हो।।
भावों की शुद्धि हो, निजगुण की वृद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा।।5।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन विशुद्धि हो, आतम की शुद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा-2।।टेक.।।
घृत का इक लघु दीपक ले, प्रभु की आरति कर लूँ मैं।
मेरा मोह तिमिर क्षय हो, मानव जीवन सुखमय हो।।
भावों की शुद्धि हो, निजगुण की वृद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा।।6।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यः मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन विशुद्धि हो, आतम की शुद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा-2।।टेक.।।
गंध सुगंधित धूप लिया, प्रभू पूजन में चढ़ा दिया।
अष्टकर्म मेरे क्षय हों, मानव जीवन सुखमय हो।।
भावों की शुद्धि हो, निजगुण की वृद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा।।7।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन विशुद्धि हो, आतम की शुद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा-2।।टेक.।।
सेव व आम अनार लिया, प्रभु पूजन में चढ़ा दिया।
मोक्ष मिले दुख का क्षय हो, मानव जीवन सुखमय हो।।
भावों की शुद्धि हो, निजगुण की वृद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा।।8।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन विशुद्धि हो, आतम की शुद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा-2।।टेक.।।
अर्घ्य चढ़ा प्रभु पूजन की, भाव हैं ये ''चन्दनामती''।
मिले अनघ पद दुख क्षय हों, मानव जीवन सुखमय हो।।
भावों की शुद्धि हो, निजगुण की वृद्धि हो,
आगे तीर्थंकर बनके इस जग से मुक्ति हो,
आओ करें मिल आज सोलहकारण पूजा।।9।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा –

शांतीधारा के लिए, लिया है प्रासुक नीर।
सोलह भावन भाय के, हो जाऊँ भव तीर।।10।।

शांतये शांतिधारा।

पुष्पांजलि के हेतु मैं, पुष्प सुगंधित लाय।
सोलहकारण पर्व में, गुण उपवन खिल जाय।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

जाप्य मंत्र– **ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारण-भावनाभ्यो नमः।**

जयमाला

–शेरछंद –

जय जय प्रभो! दर्शनविशुद्धि भावना भाऊँ।
आत्मा को शुद्ध करके गुण के पुष्प खिलाऊँ।।
हे नाथ! कृपा करके मुझे शक्ति दीजिए।
सोलह सुभावना के लिए युक्ति दीजिए।।1।।

पहली जो है दर्शनविशुद्धि भावना कही।
अष्टांग सहित दोष रहित देती शिवमही।।
हे नाथ! कृपा करके मुझे शक्ति दीजिए।
सोलह सुभावना के लिए युक्ति दीजिए।।2।।

दूजी विनयसम्पन्नता सिखलाती विनय को।
अतिचार रहित शीलव्रत है पालना सबको।।
हे नाथ! कृपा करके मुझे शक्ति दीजिए।
सोलह सुभावना के लिए युक्ति दीजिए।।3।।

चौथी अभीक्ष्ण ज्ञान में उपयोग कराती।
संवेग भावना जगत् से राग हटाती।।
हे नाथ! कृपा करके मुझे शक्ति दीजिए।
सोलह सुभावना के लिए युक्ति दीजिए।।4।।

निज शक्ति के अनुसार त्याग भावना भाएँ।
शक्ती के ही अनुसार तपस्या भी बढ़ाएँ।।
हे नाथ! कृपा करके मुझे शक्ति दीजिए।
सोलह सुभावना के लिए युक्ति दीजिए।।5।।

फिर भावना जो साधु समाधी की भाते हैं।
वे निज समाधि साध मोक्ष पद को पाते हैं।।
हे नाथ! कृपा करके मुझे शक्ति दीजिए।
सोलह सुभावना के लिए युक्ति दीजिए।।6।।

गुरुओं की वैयावृत्ति का जो भाव बनाते।
वे भीम के समान तन की शक्ति को पाते।।
हे नाथ! कृपा करके मुझे शक्ति दीजिए।
सोलह सुभावना के लिए युक्ति दीजिए।।7।।

अर्हन्त-सूरि-बहुश्रुत-प्रवचन की भक्ति से।
हो जाती आतमा को प्राप्त ज्ञान शक्ति है।।
हे नाथ! कृपा करके मुझे शक्ति दीजिए।
सोलह सुभावना के लिए युक्ति दीजिए।।8।।

आवश्यकापरिहाणि भावना है बताती।
धार्मिक क्रिया में सावधानी रखना सिखाती।।
हे नाथ! कृपा करके मुझे शक्ति दीजिए।
सोलह सुभावना के लिए युक्ति दीजिए।।9।।

जिनधर्म की प्रभावना की भावना करूँ।
प्रवचन के वात्सल्य की बस कामना करूँ।।
हे नाथ! कृपा करके मुझे शक्ति दीजिए।
सोलह सुभावना के लिए युक्ति दीजिए।।10।।

इन सोलहों शुभ भावना को मन में बसाऊँ।
पूजन में ''चन्दनामती'' पूर्णार्घ्य चढ़ाऊँ।।
हे नाथ! कृपा करके मुझे शक्ति दीजिए।
सोलह सुभावना के लिए युक्ति दीजिए।।11।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–शंभु छंद –

जो रुचिपूर्वक सोलहकारण, भावना की पूजा करते हैं।
मन-वच-तन से इनको ध्याकर, निज आतम सुख में रमते हैं।।
तीर्थंकर के पद कमलों में, जो मानव इनको भाते हैं।
वे ही इक दिन 'चन्दनामती', तीर्थंकर पदवी पाते हैं।।

।।इत्याशीर्वादः, पुष्पांजलिः।।

108 फुट उत्तुंग पूर्वाभिमुखी भगवान ऋषभदेव, ऋषभगिरि, मांगीतुंगी (नासिक) महाराष्ट्र
मूर्ति का एनर्जी लेवल (ऊर्जा स्तर)

(19 अप्रैल 2016 को श्री संदीप गोधा, मकराना-राजस्थान द्वारा जर्मन एनर्जी स्केल पर बोविस यूनिट में मापा गया)

पंचामृत अभिषेक के पश्चात् -1 लाख 7,000 बोविस स्केल

मूर्ति का एनर्जी लेवल

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती -97,000 बोविस स्केल

माताजी का एनर्जी लेवल

(सामान्यतया, सिद्धक्षेत्रों का एनर्जी लेवल लगभग 65,000 बोविस स्केल एवं एक सामान्य मनुष्य का एनर्जी लेवल लगभग 12,000 बोविस स्केल रहता है)

DASHLAKSHAN DHARMA POOJA

Written by : Aryika Chandnamati

STHAPNA

Adilla Chhand...

Ten Dharmas are Supreme in the Universe.
Ten Dharmas are peaceful in the Universe.
Their names are the Uttam Kshama etc.
So, I worship these Dharmas with eight dravyas.

Om hreem Uttam Kshamaadi dash dharma! Atra avatar avatar samvaushat.

Om hreem Uttam Kshamaadi dash dharma! Atra tishtha tishtha tha tha.

Om hreem Uttam Kshamaadi dash dharma! Atra mam sannihito bhava bhava vashat sannidhi-karanam.

ASTHAK

Tune: Kya Khoob Dikhti Ho...

We can get peace in the world,
By worship to the God.
We can get the happiness,
By prayer to the God.
Right path of salvation is the worship to the God.
We can get...

Pure water of the river... the river.
We have brought in the golden pot, O Jinvar!
We worship the ten dharmas... ten dharmas.
The Soul will be pure as soon as, O Jinvar!
We can get the happiness,
By prayer to the God.
Right path of salvation is the worship to the God.
We can get peace in the world,
By worship to the God. [1]

Om hreem Uttam Kshamaadi dash dharmebhyah Jalam nirvapameeti swaha.

Pure sandal of Kashmeer... of Kashmeer
We have brought in the golden pot, O Jinvar!
We worship the ten dharmas... ten dharmas.
The soul will be pure as soon as, O Jinvar!
We can get the happiness,
By prayer to the God.
Right path of salvation is the worship to the God.

We can get peace in the world,
By worship to the God. [2]

Om hreem Uttam Kshamaadi dash dharmebhyah Chandnam nirvapameeti swaha.

Pure Akshat of white rice... white rice.
We have brought in the golden plate, O Jinvar!
We worship the ten dharmas... ten dharmas.
The soul will be pure as soon as, O Jinvar!
We can get the happiness,
By prayer to the God.
Right path of salvation is the worship to the God.
We can get peace in the world,
By worship to the God. [3]

Om hreem Uttam Kshamaadi dash dharmebhyah Akshatam nirvapameeti swaha.

Many flowers of the garden... the garden.
We have brought in the golden plate, O Jinvar!
We worship the ten dharmas... ten dharmas.
The soul will be pure as soon as, O Jinvar!
We can get the happiness,
By prayer to the God.
Right path of salvation is the worship to the God.
We can get peace in the world,
By worship to the God. [4]

Om hreem Uttam Kshamaadi dash dharmebhyah Pushpam nirvapameeti swaha.

The plate of many dishes... many dishes.
We have brought in the golden plate, O Jinvar!
We worship the ten dharmas... ten dharmas.
The soul will be pure as soon as, O Jinvar!
We can get the happiness,
By prayer to the God.
Right path of salvation is the worship to the God.
We can get peace in the world,
By worship to the God. [5]

Om hreem Uttam Kshamaadi dash dharmebhyah Naivedyam nirvapameeti swaha.

One deepak of the pure ghee... the pure ghee.
We have brought in the golden plate, O Jinvar!
We worship the ten dharmas... ten dharmas.
The soul will be pure as soon as, O Jinvar!
We can get the happiness,
By prayer to the God.

Right path of salvation is the worship to the God.
We can get peace in the world,
By worship to the God. [6]

Om hreem Uttam Kshamaadi dash dharmebhyah Deepam nirvapameeti swaha.

Pure dhoop of scented items... scented items.
We have brought in the golden plate, O Jinvar!
We worship the ten dharmas... ten dharmas.
The soul will be pure as soon as, O Jinvar!
We can get the happiness,
By prayer to the God.
Right path of salvation is the worship to the God.
We can get peace in the world,
By worship to the God. [7]

Om hreem Uttam Kshamaadi dash dharmebhyah Dhoopam nirvapameeti swaha.

Many dry fruits and green fruits... green fruits.
We have brought in the golden plate, O Jinvar!
We worship the ten dharmas... ten dharmas.
The soul will be pure as soon as, O Jinvar!
We can get the happiness,
By prayer to the God.
Right path of salvation is the worship to the God.
We can get peace in the world,
By worship to the God. [8]

Om hreem Uttam Kshamaadi dash dharmebhyah Falam nirvapameeti swaha.

Golden plate of eight dravyas... eight dravyas.
`Chandanamati' we offer in front of Jinvar.
We worship the ten dharmas... ten dharmas.
The soul will be pure as soon as, O Jinvar!
We can get the happiness,
By prayer to the God.
Right path of salvation is the worship to the God.
We can get peace in the world,
By worship to the God. [9]

Om hreem Uttam Kshamaadi dash dharmebhyah Arghyam nirvapameeti swaha.

Arghyas of Ten Dharmas

Tune: Shivam Shuddh Buddham...

Kshama dharma is best than all the dharmas.
Kshama Parva is best than all the Parvas.

For that Kshama dharma, we offer the Arghyam.
To get dharma Kshama, for being the Siddham. [1]

Om hreem Uttam Kshama dharmangaya arghyam nirvapameeti swaha.

It is said about second dharma Mardav.
We should not attain any proud in nature.
We offer the arghyam for dharma Mardav.
To get dharma Mardav, for being the Siddham. [2]

Om hreem Uttam Mardav dharmangaya arghyam nirvapameeti swaha.

The third dharma Arjav teaches all of us.
We should never do deceitful behaviour.
We offer the arghyam, for dharma Arjav.
To get dharma Arjav, for being the Siddham. [3]

Om hreem Uttam Arjav dharmangaya arghyam nirvapameeti swaha.

It is said about the fourth Satya dharma.
Always all of us should tell the true words.
We offer the arghyam, for dharma Satya.
To get dharma Satya, for being the Siddham. [4]

Om hreem Uttam Satya dharmangaya arghyam nirvapameeti swaha.

Two types of purity, occur in which.
That is known as Uttam Shauch dharma.
We offer the arghyam for dharma Shauch.
To get dharma Shauch, for being the Siddham. [5]

Om hreem Uttam Shauch dharmangaya arghyam nirvapameeti swaha.

The Sanyam dharam tells to all of us.
We should control our all the senses.
We offer the arghyam for dharma Sanyam.
To get dharma Sanyam, for being the Siddham. [6]

Om hreem Uttam Sanyam dharmangaya arghyam nirvapameeti swaha.

The Tap dharma tells us about two types.
We should purify the soul by penance.
We offer the arghyam, for that dharam Tap.
To get that dharam Tap, for being the Siddham. [7]

Om hreem Uttam Tap dharmangaya arghyam nirvapameeti swaha.

The Tyag Dharma tells us about donation.
Four kinds are there, that all should do.
We offer the arghyam, for that dharam Tyag.
To get Tyag Dharma, for being the Siddham. [8]

Om hreem Uttam Tyag dharmangaya arghyam nirvapameeti swaha.

Uttam Akinchan Dharam tells us this.
We, too, should attain the five Anuvratas.
We offer the arghyam, for dharma Akinchan.
To get dharma Akinchan, for being the Siddham. [9]

Om hreem Uttam Akinchanya dharmangaya arghyam nirvapameeti swaha.

Bramhacharya is best than all the dharmas.
We should attain Bramhacharya the earliest.
We offer the arghyam, for Bramhacharya dharma.
To get Bramhacharya, for being the Siddham. [10]

Om hreem Uttam Bramhacharya dharmangaya arghyam nirvapameeti swaha.

JAAPYA MANTRA

Om hreem Uttam Kshama Mardav Arjav Satya Shauch Sanyam Tap Tyag Akinchanya Bramhacharya dashlakshan dharmebhyo namah.

(recite it for 108, 27 or 9 times)

JAIMALA

Tune: Chand mere aa jaa re...

Today we worship ten Dharmas, Today we worship ten Dharmas.
Uttam Kshama and Mardav, Arjav supremo all these are.
Today we worship ten Dharmas.

So much beautiful is the garden of these ten Dharmas.
From Bhaadon shukla fifth day, ten days are called Dash Lakshan.
Today we worship ten Dharmas, ... [1]

These dharmas teach us friendship, with all creatures and human.
These dharmas teach us peace of soul of all the human.
Today we worship ten Dharmas, ... [2]

All the creatures are wandering in universe from eternal.
And they are also impure by their ignorancy.
Today we worship ten Dharmas, ... [3]

This parva starts with Kshama and ended by Kshama vani.
Many Vratas also do come, in between this Dash Lakshan.
Today we worship ten Dharmas, ... [4]

Jain Saints follow these dharmas in the most properly way.
`Chandnamati' we also want to get them in life.
Today we worship ten Dharmas, ... [5]

Om hreem Uttam Kshama Mardav Arjav Satya Shauch Sanyam Tap Tyag Akinchanya Bramhacharya Dharmebhyo Jaimala Poornarghyam nirvapameeti swaha.

Ityasheervadah, Pushpanjalih.

दशलक्षण पर्व-6 से 16 सितम्बर के उपलक्ष्य में प्रस्तुत भजन श्रृंखला

भजन

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज-चाँद मेरे आ जा रे.....

पर्व दशलक्षण आया है-2,
भक्तों ने प्रभु की भक्ती से अपना, उपवन सजाया है।। पर्व.।।
दशलक्षण का ये बगीचा, कितना सुन्दर लगता है।
भादों शुक्ला पंचमि से, चौदस तक यह सजता है।।
पर्व दशलक्षण आया है।।1।।
कर्मों की विलक्षण गति है, ये सबको नाच नचाते।
इनसे मुक्ती पाने की, युक्ती ये धर्म बताते।।
पर्व दशलक्षण आया है।।2।।
यह पर्व क्षमागुण का शुभ, संदेश लिए आता है।
भव-भव के वैर भुलाकर, मैत्री को सिखलाता है।।
पर्व दशलक्षण आया है।।3।।
मेरे आतम में भी प्रभु, ये धर्म दशों बस जावें।
पारस प्रभु सम कष्टों में, भी धैर्य हृदय बस जावे।।
पर्व दशलक्षण आया है।।4।।
यह धर्म कल्पतरु मुझको, सौभाग्य से प्राप्त हुआ है।
''चन्दनामती'' नरभव का, अब सच्चा ज्ञान हुआ है।।
पर्व दशलक्षण आया है।।5।।

उत्तम मार्दव धर्म का भजन

धर्म मार्दव को सब मिल निभाना, धर्म का रूप जग को दिखाना।
मान मानव का गुण बन गया है,
जब कि अवगुण ही उसको कहा है।
अवगुणों को हृदय से हटाना, धर्म का रूप जग को दिखाना।। धर्म मार्दव.।।1।।

इस अहं ने ही सबको ठगा है,
इन्द्रिय विषयों में ही मन लगा है।
सोच अब मन को विनयी बनाना, धर्म का रूप जग को दिखाना।। धर्म मार्दव.।।2।।

ज्ञानियों की विनय करना सीखो,
संयमी की विनय करना सीखो,
संयमी बनके संयम निभाना, धर्म का रूप जग को दिखाना।। धर्म मार्दव.।।3।।

फल सहित वृक्ष झुकता सदा है,
ऐसे ही गुण सहित मन कहा है।
मन का उपवन गुणों से सजाना, धर्म का रूप जग को दिखाना।। धर्म मार्दव.।।4।।

विनय विद्या प्रदाता कही है,
ऋद्धि सिद्धी की दाता वही है।
"चन्दनामति" हृदय मृदु बनाना, धर्म का रूप जग को दिखाना।। धर्म मार्दव.।।5।।

उत्तम क्षमा धर्म का भजन

तर्ज-आवाज देकर.....

क्षमा धर्म से अपनी बगिया सजाओ।
गुणों की सुरभि अपने जीवन में लाओ।।
न क्रोधी प्रकृति आत्मा की कही है।
वहाँ तो सदा शान्ति सरिता बही है।।
नहीं क्रोध कर अपनी गरिमा घटाओ।
गुणों की सुरभि.....।।1।।
हो यदि कोई दुश्मन तुम्हारा जगत में।
उसे जीत सकते हो तुम प्रेम बल से।।
सहनशीलता धैर्य शक्ती बढ़ाओ।
गुणों की सुरभि.....।।2।।
प्रभु पार्श्व ने ही क्षमा धर्म पाला।
इसे धार ऋषियों ने उपसर्ग टाला।।
उन्हीं सबके चरणों में मस्तक झुकाओ।
गुणों की सुरभि.....।।3।।
करूँ प्रार्थना प्रभु मुझे भी क्षमा दो।
प्रभो! मेरे मन को भी चन्दन बना दो।।
यही भावना ''चन्दनामति'' बनाओ।
गुणों की सुरभि.....।।4।।

उत्तम आर्जव धर्म का भजन

तर्ज-दिन रात मेरे स्वामी.....

हे नाथ! आपसे मैं, वरदान एक चाहूँ। वरदान.....
ऋजुता हृदय में लाकर, आर्जव धरम निभाऊँ। आर्जव.....

ना जाने क्यों कुटिलता का भाव आ ही जाता।
हे प्रभु! उसे हटा कर समता का भाव लाऊँ।। समता का...।।1।।

माया में फंसके मैंने मानव जनम गंवाया।
अनमोल इस रतन को अब ना गंवाने पाऊँ।। अब ना....।।2।।

यह भी सुना है माया से पशुगती है मिलती।
उस पशुगती में हे प्रभु! अब मैं न जाना चाहूँ।। अब मैं....।।3।।

शायद अनादिकालिक संस्कार संग लगे हैं।
मैं चाहकर भी हे प्रभु! उनसे न छूट पाऊँ।। उनसे न....।।4।।

यह पुण्य कर्म ही जो गुरु देशना मिली है।
फिर 'चन्दनामती' मैं, मन में उसे बिठाऊँ।। मन में....।।5।।

उत्तम शौच धर्म का भजन

तर्ज-जिस गली में.....

जिस गती में न उत्तम धरम मिल सके,
उस गती में मुझे नाथ! जाना नहीं।
जिस मती से धरम शौच पल ना सके,
उस मती को भी हे नाथ! पाना नहीं।।टेक.।।

हीरा सा यह मनुज तन मिला आज है।
लोभ में ही गया यदि तो क्या लाभ है।।
लोभ में ही गया यदि.....
जिस गती में धरम लाभ ना मिल सके,
उस गती में मुझे नाथ! जाना नहीं।।1।।

कुछ तो सीमा करो अपनी इच्छाओं की।
फिर तो शुचिता बढ़ेगी निजात्मा में भी।।
फिर तो शुचिता बढ़ेगी.....
लोभ का त्याग पूरा भी कर ना सको,
तो भी ज्यादा उसी में लुभाना नहीं।। जिस....।।2।।

लोभवश चक्रवर्ती नरक में गया।
भरत सम्राट् ने तज उसे शिव लहा।।
भरत सम्राट् ने तज.....
'चन्दनामति' जहाँ लक्ष्य की पूर्ति हो,
रत्नत्रय धारकर मुझको जाना वहीं।। जिस....।।3।।

उत्तम सत्य धर्म का भजन

तर्ज-झिलमिल सितारों का.....

सत्य धरम जब पालन होगा, पापों का प्रक्षालन होगा।
इसका पालन वचन सिद्धि का साधन होगा।। सत्य धरम.।।

जाने कितने झूठ भी मैंने, जनम जनम में बोले हैं।
स्वार्थसिद्धि के कारण अपने, वचन न मैंने तोले हैं।।
अब उन सबका क्षालन होगा, सत्य धरम जब पालन होगा।।सत्य.।।1।।

बहुत से विषकण मिलकर जैसे, अमृत नहिं बन सकते हैं।
कई झूठ मिल कर वैसे ही, सत्य नहीं बन सकते हैं।।
धर्म सदा अमृत सम होगा, सत्य धरम जब पालन होगा।। सत्य.।।2।।

साधू उत्तम सत्य वचन को, पूर्णरूप से धरते हैं।
श्रावक भी सच्चाई का, आंशिक पालन कर सकते हैं।।
अतः झूठ वच टालन होगा, सत्य धरम जब पालन होगा।। सत्य.।।3।।

राजा वसु ने झूठ बोलकर, अधोगती को प्राप्त किया।
सत्य बोलने वालों ने ''चन्दना'' ऊर्ध्वगति प्राप्त किया।।
धर्म सदा मन भावन होगा, सत्य धरम जब पालन होगा।। सत्य.।।4।।

उत्तम संयम धर्म का भजन

तर्ज-बाबुल की दुआएँ.....

उत्तम संयम के पालन से, मानव को शिव का द्वार मिले।
निज मन पे नियंत्रण करने से, रत्नत्रय का भंडार मिले।।
पारस मणि को पाना जैसे, दुर्लभ ही नहीं अतिदुर्लभ है।
वैसे ही संयमरूपी मणि को, पाना भी अति दुर्लभ है।।
यदि मिल जावे वह रत्न तो समझो, मोक्षपंथ साकार मिले।
निज मन पे नियंत्रण करने से, रत्नत्रय का भंडार मिले।।1।।

इन्द्रियसंयम-प्राणीसंयम से, संयम द्वैविध माना है।
इनका पालन करने वालों को, शिवपद निश्चित पाना है।।
श्रावक को भी किंचित् संयम, पालन से सुख आधार मिले।
निज मन पे नियंत्रण करने से, रत्नत्रय का भंडार मिले।।2।।

यदि संयम पालन कर न सको, निंदा न संयमी की करना।
उनकी पूजन आहार आदि से, निज आतम शुद्धी करना।।
''चन्दनामती'' संयम व संयमी, में ही सुख का सार मिले।
निज मन पे नियंत्रण करने से, रत्नत्रय का भंडार मिले।।3।।

उत्तम तप धर्म का भजन

तर्ज-हम लाए हैं तूफान से.....

हे वीतराग प्रभु! मुझे तपशक्ति दीजिए।
जब तक तपस्या कर न सकूँ भक्ति दीजिए।।
विपरीत अर्थ करके तप का पतित हो गया।
मैं क्षणिक सुख को भोग कर उसमें ही खो गया।।
हे नाथ! इन दुखों से मुझको मुक्ति दीजिए।
जब तक तपस्या कर न सकूँ भक्ति दीजिए।।1।।

कन्या अनंगशरा ने तप किया था वनों में।
बन करके विशल्या दिखाई शक्ति क्षणों में।।
हे नाथ! मुझे भी वही तपशक्ति दीजिए।
जब तक तपस्या कर न सकूँ भक्ति दीजिए।।2।।

उत्तम तपो धरम से मुनी मोक्ष जाते हैं।
श्रावक भी करें तप यदी तो स्वर्ग पाते हैं।।
हे नाथ! 'चन्दनामती' ये युक्ति दीजिए।
जब तक तपस्या कर न सकूँ भक्ति दीजिए।।3।।

उत्तम त्याग धर्म का भजन

तर्ज-तुमसे मिलने को.....

त्याग लेने का मन करता है।
हे प्रभो! त्याग लेने का मन करता है।।टेक.।।

भ्रान्तिवश मैंने शुभ कर्म को तज दिया।
विषय भोगों में ही अपना मन कर लिया।
उसे तजने का मन करता है।।हे प्रभो.।।1।।

त्याग की महिमा अब मैंने जानी प्रभो।
दान की गरिमा अब मैंने मानी प्रभो।।
दान देने का मन करता है।।हे प्रभो.।।2।।

देना आहार औषधि अभय दान भी।
ज्ञान का दान दे तजना अज्ञान भी।।
ज्ञान लेने का मन करता है।। हे प्रभो.।।3।।

साधु ही त्याग उत्तम धरम पालते।
आज भी वे परम शांति को धारते।।
शांति पाने को मन करता है।। हे प्रभो.।।4।।

दान देकर के श्रावक जनम धन्य हो।
''चन्दनामति'' मेरा मन भी धन धन्य हो।।
सुरभि लेने का मन करता है।। हे प्रभो.।।5।।

उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म का भजन

तर्ज-दीदी तेरा.....

ब्रह्मचर्य व्रत को निभाना, हे नाथ! कठिन है इसे पाना।
झुकता उसके आगे जमाना, हे नाथ! कठिन है इसे पाना।।टेक.।।

जो विषयों का त्यागी है आत्मा का रागी,
वही ब्रह्मचर्य सहित है विरागी!
महासाधुगण की निधी यह धरोहर,
वही इसके बल पर बनें वीतरागी।।
उनको जग ने पावन है माना, हे नाथ! कठिन है उसे पाना।।1।।

सती सीता ने इसका कुछ अंश पाला,
हुई शीलव्रत की परीक्षा विशाला।
बनी जल की सरिता वो अग्नी की ज्वाला,
सुदर्शन का भी व्रत ने उपसर्ग टाला।।
उनकी जय से गूंजा जमाना, हे नाथ! कठिन है इसे पाना।।2।।

मुझे भी प्रभो! इसका पालन करा दो,
मेरी आतमा को भी पावन बना दो।
विषयों से मुझको विरागी बना दो,
मुझे 'चन्दना' आत्मस्वादी बना दो।।
जिससे हो ना भव भव में आना, हे नाथ! कठिन है इसे पाना।।3।।

उत्तम आकिंचन्य धर्म का भजन

तर्ज-तुमसे लागी लगन.....

धर अकिंचन धरम, कर ले तू शुभ करम, भव्य प्राणी,
धन्य होगी तेरी जिन्दगानी।।
ना मे किंचन अकिंचन धरम है, पर को निज मानना ही भरम है।
तज दे मिथ्या भरम, पालते दश धरम, भव्य प्राणी।
धन्य होगी तेरी जिन्दगानी।।1।।

पांच पापों में परिग्रह भी इक है, इसको मुनिवर न धरते तनिक हैं।
उनके पद में नमन, करके पावन हो मन, भव्य प्राणी,
धन्य होगी तेरी जिन्दगानी।।2।।

इसका कुछ त्याग श्रावक भी करते, पांच अणुव्रत का पालन जो करते।
अणुव्रतों का कथन, जिनवरों का वचन, भव्य प्राणी,
धन्य होगी तेरी जिन्दगानी।।3।।

व्रत सहित श्रेष्ठ मानव जनम है, व्रत रहित मन को रखना न तुम है।
व्रत से शिक्षा लें हम, 'चन्दनामति' है मन, सुनले प्राणी,
धन्य होगी तेरी जिन्दगानी।।4।।

क्षमावणी पर्व का भजन

तर्ज-तीरथ कर लो पुण्य कमा लो.....

क्षमा गुण को मन में धर लो, क्षमा को वाणी में कर लो।
शत्रु-मित्र सबमें समता का, भाव हृदय भर लो।।
क्षमा गुण को मन में धर लो।।टेक.।।

मैत्री का हो भाव सभी, प्राणी के प्रति मेरा।
गुणी जनों को देख हृदय, आल्हादित हो मेरा।।
वही आल्हाद प्रगट कर लो,
क्रोध वैर भावों को तजकर, मन पावन कर लो।
क्षमा गुण को मन में धर लो।।1।।

चिरकालीन शत्रुता भी यदि, किसी से हो मेरी।
उसे भूलकर मित्रभावना, बने प्रभो! मेरी।।
भावना सदा सरल कर लो,
चन्दन सी शीतलता से, मन को शीतल कर लो।
क्षमा गुण को मन में धर लो।।2।।

एक-एक ईंटों को चुनने, से मकान बनता।
एक-एक धागा बुनने से, परीधान बनता।।
यही क्रम गुण में भी धर लो,
एक-एक गुण से आत्मा को, परमात्मा कर लो।
क्षमा गुण को मन में धर लो।।3।।

दश धर्मों के आराधन से, मृदुता आती है।
भावों में ''चन्दनामती'' खुद, ऋजुता आती है।।
रत्नत्रय को धारण कर लो,
पर्वों का इतिहास यही, जीवन में अमल कर लो।
क्षमा गुण को मन में धर लो।।4।।

दशलक्षण पर्व के संदर्भ में प्रस्तुत विभिन्न नाटक

लेखिका-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

''इन नाटकों का मंचन करके जनसामान्य को धर्म का महत्व बताएँ''

(१) उत्तम क्षमा धर्म-नाटक

(क्रोध आत्मा की वैभाविक परिणति है और क्षमा आत्मा का स्वाभाविक गुण है। यह सभी जानते हैं कि क्रोध कषाय का त्याग करने से ही क्षमा गुण प्रकट होता है। क्रोध कषाय में प्राणी अधिक देर नहीं रह सकता, जबकि क्षमा के साथ दीर्घकाल तक शान्तिपूर्वक जीवन यापन कर सकता है।

अनुकूल परिस्थितियों में क्षमा धर्म का पालन सरल होता है किन्तु प्रतिकूल परिस्थितियों में क्षमा धारण करना बड़ा कठिन होता है। इन्हीं दोनों पर आधरित प्रस्तुत है—एक लघु रूपक)

(मंच पर पर्दा खुलते ही)

(क्रोध नामक एक व्यक्ति अपने घर में प्रवेश करता है, उसके बच्चे और पत्नी सभी भय से काँपते हुए अपने-अपने काम में लग जाते हैं)

क्रोध—(गुस्से में बड़बड़ाता हुआ) खाना वाना मिलेगा या नहीं ?

महिला—हाँ, हाँ, अभी लाई भोजन की थाली, सब तैयार है। आप हाथ-मुँह धोकर आसन ग्रहण करें, बस खाना हाजिर है।

क्रोध—(जोर से) क्या मेरे हाथों में मैला लगा है जो हाथ धोने की आज्ञा दे रही हो, मुझे नहीं धोना हाथ-पैर।

महिला—जैसी आपकी मर्जी, लीजिए भोजन शुरू करिये (थाली सामने रख देती है। दाल में नमक डालना भूल गई थी अतः भोजन का ग्रास मुँह में जाते ही शुरू हो गया कोहराम।)

क्रोध—(ग्रास मुँह में रखते ही थाली उठाकर जोर से फेंकता है।) भाड़ में जाए ऐसा भोजन, तुझे तो भोजन बनाना भी नहीं आता है, जब देखो नमक ही गायब। निकल जा मेरे घर से, मुझे तेरी परवाह नहीं। दिन भर अपने लाड़लों को पकवान बनाकर खिलाएगी और मेरे सामने अलोना भोजन रखते तुझे शरम नहीं आती।

महिला—शान्ति रखें महाराज ! (हाथ जोड़ती हुई) मैं अभी नमक लाती हूँ। भूल से ऐसी गलती हो गई है, आप इतना नाराज मत हों।

क्रोध—(पैर से ठोकर मारते हुए) तेरी इतनी मजाल, मेरे सामने जबान खोल रही है। अच्छा! यदि तुम लोग इस घर से नहीं जाते हो तो मैं ही निकल जाता हूँ। (घर से बाहर निकलकर चला जाता है, बाहर आकर मैदान में जोर-जोर से हंसता और गीत गाता है)

क्रोध—हः हः हः..... मैंने कैसा कमाल दिखाया। मेरी फटकारों से सबके होश गुम हो गए।

गीत *—तर्ज-काली तेरी चोटी.....*

तीनों लोकों में हमारा बड़ा नाम है।
मैं हूँ बड़ा क्रोधी नाराजी मेरा काम है।
क्रोध यदि न करोगे तो कोई नहीं डरेगा।
झूठ को भी सच्चा साबित क्रोध ही तो करेगा।
जिसने मुझको पाला उससे सब परेशान हैं।।तीनो.।।

एक क्षमा नाम की महिला उधर मार्ग से निकलती है, आश्चर्य सहित क्रोध का गीत सुनकर मुस्कुराती हुई कहती है—

क्षमा—हूँ..... तो आकाशवाणी से महानुभाव क्रोधजी का संगीत प्रसारित हो रहा है।

क्रोध—(अकड़कर) लेकिन तू कौन होती है मेरे गीत का मजाक उड़ाने वाली ? बोल तेरा नाम क्या है ?

क्षमा—जी साहब, मेरा नाम है क्षमा, मेरा काम है क्षमा। मैं इस गुण से सभी का दिल जीतने में समर्थ हूँ।

क्रोध—इतना घमंड मत करो देवी जी ! मेरे ऊपर तुम्हारा कोई असर पड़ने वाला नहीं, अभी तो अपने घर में सबको छट्ठी का दूध याद दिलाकर आया हूँ।

हः हः हः....."जो मुझसे टकराएगा वह चूर-चूर हो जाएगा।"

क्षमा—भाई साहब ! आप गलत सोच रहे हैं। मैं तो एक ऐसी गंगा हूँ जिसमें सारी क्रोध की गंदगी भी आकर ठंडी और पवित्र हो जाती है। मैं क्षमा नाम की ऐसी चाँदनी हूँ जिसमें समस्त क्रोध का अन्धकार विलीन होकर प्रकाश में परिवर्तित हो जाता है, मैं ऐसी पृथ्वी मैय्या हूँ जिस पर दुष्ट और सज्जन सभी आश्रय प्राप्त करते हैं।

क्रोध—बंद करो बकवास, मुझे प्रवचन देने लगीं महारानी जी, तेरे जैसी को तो मैं एक फूंक में उड़ा दूँगा, चली जा यहाँ से, अब मेरे सिर में बहुत तेज दर्द हो रहा है। (सिर पकड़कर बैठ जाता है।)

ऊपर से आकाशवाणी होती है—अरे क्रोध के बच्चे! तूने ही संसार का सर्वनाश किया है, तेरे कारण ही आज सारे देश में हिंसा का तांडव नृत्य हो रहा है, तू महापापी है तुझे कभी प्रकृति माफ नहीं कर सकती, तूने न जाने कितने परिवार, समाज और संगठनों को बर्बाद किया है, धिक्कार है, तुझे धिक्कार है।

क्रोध—(चौंककर इधर-उधर देखता है, भय से पूछता है) यह कौन कह रहा है ?

क्षमा—घबराओ मत ! यह ईश्वरीय वाणी है। भारत माता अपने एक बिगड़े सपूत को मधुर सम्बोधन प्रदान कर रही है, जिसका अभिप्राय स्पष्ट है—

तर्ज—मेरे अंगने में .....

तेरे परमातम में क्षमा का निवास है।
जिसे भूल क्रोध में तू करता विश्वास है।।टेक.।।
जैसे ठण्डी शीत से, जंगल भी जल जाते हैं।
वैसे ही उत्तम क्षमा से, कर्मवन जल जाते हैं।
आ जा तू भी स्व में, पर में न तेरा वास है।। तेरे परमातम.।।1।।
क्षमा के प्रभाव से, अग्नी भी शीतल होती है।
क्रोध के प्रभाव से, बुद्धि भी भ्रष्ट होती है।।
पारस प्रभु को देखो क्षमा ही जिनका वास है।। तेरे परमातम.।।2।।

(गीत के पश्चात् पुनः क्षमादेवी क्रोध को सम्बोधित करने लगती हैं)—

क्षमा—देखो मेरे भाई ! आप इस क्रोध के कारण कितने दुःखी हैं, यह भयंकर सिरदर्द आपके मस्तिष्क में ब्रेन हेमरेज, हाई ब्लडप्रेशर, हार्टअटैक जैसी अनेकों बीमारियाँ पैदा कर सकता है। आज आपके जैसे न जाने कितने मनुष्य अपने क्रोध के कारण स्वयं शारीरिक स्वास्थ्य से परेशान हैं और उनके परिवार तो संकट के गहरे गड्ढे में डूबे पड़े हैं।

ऐ धरती के सपूतों ! "जब जागो तभी सबेरा" इस सूक्ति को अपनाकर आज आप क्रोध का त्याग करें, अपनी अस्त-व्यस्त एवं डरी-सहमी गृहस्थी पुनः प्यार से सवारें, अपने आत्मधर्म को पहचानें, फिर देखेंगे कि आपकी जीवन बगिया में कैसी हरियाली आ गई है। वही पुष्प जो मुरझा गए थे क्षमा जल के सिंचन से खिल जाएंगे, वही क्यारी जो क्रोध की तपन से झुलस गई थी पुनः हरी हो जाएगी तथा आप अपने को, परिवार को, समाज को एवं सारे देश को खुशहाल पाएंगे।

सुनो ! मैं इसी सम्बन्ध में आपको एक मार्मिक पौराणिक कथानक सुनाती हूँ जिसमें स्वयं क्रोध के फल को भोगी हुई एक महिला की साक्षात् कहानी है—

(बीच में ही एक अप टू डेट डॉक्टर मंच पर प्रवेश करता है, जिसके एक हाथ में इंजेक्शन की सीरींज हैं और दूसरे हाथ में इंजेक्शन वाली एक छोटी शीशी में थोड़ा-सा लाल रंग है, वह जनता को सम्बोधित करता हुआ कहता है)—

डॉक्टर—अरे बन्धुओं ! सुनो, सुनो, एक क्रोधी मानव के खून की कहानी (चौंककर क्रोध और क्षमा दोनों उस डॉक्टर की ओर आश्चर्यचकित होकर देखने लगते हैं और उठकर डॉक्टर के समीप जाकर खड़े हो जाते हैं।)

डॉक्टर—(सबको दिखाते हुए) आप यह शीशी देख रहे हैं न, इसमें एस क्रोधी व्यक्ति का खून है। मैंने इसमें से आधे खून को इंजेक्शन में भरकर एक चूहे पर प्रयोग किया है। चूहे के शरीर में यह खून पहुँचते ही 22 मिनट में वह चूहा मनुष्य को काटने के लिए दौड़ पड़ा, 35 वें मिनट में स्वयं को काटना शुरू कर दिया और अंततः 50 मिनट के बाद उसने गुस्से में अपने पैर पटक-पटक कर खुद की जान गंवा दी। इस प्रयोग से यह निष्कर्ष निकलता है कि क्रोध के समय मनुष्य के खून में अत्यधिक विषैलापन आ जाता है जो उसके शरीर के स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद है, रक्त को विकृत करके बीमारियाँ उत्पन्न कराता है। जिस व्यक्ति में जितनी अधिक शांति और सहनशीलता होगी वह उतना अधिक स्वस्थ और पुण्यशाली बनेगा।

क्षमा फिर अपनी कथा शुरू करती है—

क्षमा—क्यों भाई साहब ! सुनी आपने साक्षात् घटना। एक कहानी मेरी भी सुनो—

एक ब्राह्मण की कन्या बड़ी क्रोधी स्वभाव की थी। उसे कोई तू कहकर यदि बोल देता तो वह आपे से बाहर हो जाती थी तथा उसकी दस पीढ़ियों तक को गाली दे-देकर सारा मोहल्ला सिर पर उठा लेती थी। उसके इस स्वभाव से पहले तो कोई उससे शादी करने को तैयार नहीं था किन्तु भाग्य से एक भोला-भाला ब्राह्मण सोमशर्मा मिल ही गया, जिसने उसके पिता से कह दिया कि मैं इसे कभी "तू" कहकर नहीं बोलूंगा। कुछ दिन तक तो दोनों खूब अच्छी तरह रहे। एक दिन की बात है—

(मंच पर एक ओर दोनों बैठे हैं, दूसरी ओर अचानक दृश्य प्रारम्भ होता है। क्षमा कहानी सुना रही है)।

(बाहर से नाटक देखकर रात्रि में सोमशर्मा देर से घर आता है और दरवाजा खटखटाता है।)

सोमशर्मा—(जोर से आवाज देता हुआ) अरे ! दरवाजा खोलो, दरवाजा खोलो।

क्षमा—लेकिन गुस्से के कारण पत्नी दरवाजा नहीं खोलती है न ही कुछ बोलती है अतः सोमशर्मा को भी गुस्सा आ गया, वह बोल पड़ा।

सोमशर्मा—अरे मैं इतनी देर से आवाज दे रहा हूँ, तू बोलती भी नहीं है, कितनी गहरी नींद है तेरी।

क्षमा—तू शब्द मुँह से निकलते ही उस तुंकारी ने न आव देखा न ताव, उसने आकर दरवाजा खोला और गुस्से में घर से बाहर निकल गई और भागती चली गई। सोमशर्मा ने उसे पकड़ने का प्रयास भी किया किन्तु वह तो जंगल की ओर भाग गई, अकस्मात् उसे जंगल में एक बदमाश मिल गया और उसने उसका शील भंग करना चाहा। तब वह घबड़ाकर भगवान् का नाम स्मरण करती है। किसी तरह दैवी शक्ति से अपने शील की रक्षा करती हुई पुनः आगे भागती है।

(मंच पर एक महिला भागती हुई, सामने से एक युवक आता हुआ जो उस लड़की को पकड़ने की कोशिश करता है।)

तुंकारी—(घबड़ाती हुई) हे भगवान् ! मैं कहाँ आ गई, यह मेरे साथ कैसा अन्याय हो रहा है। (पढ़ती है) ''यह तन जाए तो जाए मेरा शील रतन ना जाए।''

(आकाशवाणी होती है) अरे दुष्ट ! इस पवित्र नारी को यदि हाथ भी लगाया तो तेरे हाथ जल जाएंगे। चल दूर हट जा..... (युवक डरकर भाग जाता है, तुंकारी इधर-उधर देखती है पुनः वहाँ से डरकर भाग जाती है।)

क्षमा—तुंकारी जब आगे बढ़ी तो कुछ चोरों से उसका मुकाबला हो गया, उन लोगों ने उसके सारे गहने उतरवा लिए और एक भील को सौंप दिया। भील ने भी उसका शील भंग करना चाहा। उस समय भी दैवी शक्ति ने उसकी रक्षा की। तब भील ने डरकर एक सेठ को सौंप दिया, देखो ! संसार की लीला उस सेठ ने भी तुंकारी पर बुरी नजर डाली वहाँ भी उसके शील की रक्षा हुई। अन्ततोगत्वा सेठ ने उसे एक रंगरेज के हाथों बेच दिया। वह रंगरेज अपने कंबल रंगने के लिए रोज तुंकारी के शरीर से प्रतिदिन खून निकालता, जिससे उसे बहुत कष्ट होता था, शरीर से प्रतिदिन खून निकलने के कारण वह बेचारी सूखकर काँटा हो गई थी।

मंच पर घावों से युक्त दुःखी तुंकारी प्रवेश करती है और कहती है—

तुंकारी—हे भगवन् ! मैंने अपने हाथों यह क्या कर डाला ? अब मुझे इस दुःख से मुक्ति कैसे मिलेगी ?

मुझे तो अपना घर भी पता नहीं है। मैं किसी तरह यदि घर पहुँच जाऊँ तो पुनः कभी क्रोध नहीं करूंगी, पतिदेव से बारंबार क्षमा याचना करूँगी। हे स्वामी ! मैंने क्रोध का फल चख लिया है किसी तरह मेरा संकट दूर करो। (चली जाती है) **क्षमा पुनः कथा प्रारम्भ करती है—**

क्षमा—एक दिन अचानक उधर उसका भाई आ गया। तुंकारी ने अपने भाई को पुकारा, भाई तो उसे पहचान भी न पाया था। तुंकारी भाई से चिपक कर रो पड़ी और अपने किए पर पछताने लगी। पुनः भाई ने राजा से कह-सुनकर अपनी बहन को रंगरेज से मुक्त कराया। उसके बाद उसने क्रोध का त्याग कर दिया।

क्रोध—अच्छा, तो मेरे द्वारा ऐसे-ऐसे अनर्थ हो जाते हैं। मुझे अपनी अज्ञानता का भान अब हो गया है। मेरे प्यारे बन्धुओं! आपने मेरा कमाल तो देख लिया है। यदि आपको इन हानियों से बचना है तो क्रोध कभी मत करना।

सभी पात्र मिलकर गीत गाते हैं—

—शेर छंद—

संसार में यदि क्रोध का विस्तार न होता।
तब तो सभी कषायों का उद्धार न होता।।
इस क्रोध से न जाने कितने घर बिगड़ गए।
इस क्रोध से ही देश और समाज ढह गए।।1।।

नहिं क्रोध के बल पर हुआ है क्रोध का शमन।
उत्तम क्षमा ही क्रोध का कर सकती है प्रशमन।।
यदि संगठित समाज करना चाहते हो तुम।
धारो स्वयं क्षमा व सहनशील बनो तुम।।2।।

भारत के सपूतों ! यही अमोघ शस्त्र है।
हिंसा से अहिंसा का सूत्र ही सशक्त है।।
सबके प्रति समभाव का झरना जो झर पड़े।
तो ''चंदनामती'' जगत में वैर ना बढ़े।।3।।

''बोलिए उत्तम क्षमा धर्म की जय''

(२) उत्तम मार्दव धर्म-नाटक

("विद्या ददाति विनयं")

लेखिका-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

मंच पर सूत्रधार प्रवेश करके कहता है—

प्यारे भाईयों एवं बहनों!

मार्दव धर्म मृदुता से उत्पन्न होता है । मान कषाय के साथ इस धर्म की पूर्ण शत्रुता है । ज्यों-ज्यों आपके हृदय से अहंकार नष्ट होता जाएगा त्यों-त्यों इस गुण का विकास प्रारम्भ होगा एवं पूर्ण अहंकार के नाश हो जाने पर आप उत्तम मार्दव धर्म से युक्त परमात्म पद प्राप्त कर सकते हैं।

वास्तव में मानव का मान — अहं ही समस्त अनर्थों का मूल है इसीलिए वह इंसान से कभी-कभी हैवान भी बन जाता है । मान— अहंकार और इससे विपरीत मृदुता—नम्रवृत्ति (विनय) इन दोनों के बीच द्वन्द्व के साथ प्रस्तुत है **एक रूपक — अहंकार के कितने रूप** ?

(मंच पर मान/ अहंकार नामक एक व्यक्ति हाथ में थैला आदि सामान लिए प्रवेश करता है और गीत गाता हुआ टहल रहा है)—

तर्ज–मेरा जूता है जापानी .....

अहंकार— मेरा अहंकार है नाम, सारे जग में मेरी शान ,

आओ मेरे भाई बहनों! सीखो मुझसे मेरा काम।- 2

मस्तक ऊँचा करना सीखो , थोड़ा अकड़ के चलना सीखो,

कभी न झुकना किसी के सम्मुख, ये ही मान का है वरदान ।। 2

हंसता है — अः हः हः हः ..... कितनी सुंदर सूक्ति मैंने बताई है तुम सभी लोगों को।

मैं तुम सबको आह्वान करता हूँ आओ ! मेरे पास वह बहू आवे जिसकी सास से न बनती हो, वह शिष्य आवे जिसके गुरू से न पटती हो, वह पुत्र आवे जिसकी बाप से न बनती हो, मैं सबको एक जड़ी-बूटी दूँगा जिससे उन लोगों की अकल ठिकाने लग जायेगी। फिर हंसता है और थैले से कुछ बूटियाँ निकालकर दिखाता है इतना सुनते ही 2-3 स्त्री-पुरूष उसके पास आकर अपना दुखड़ा कहने लगते हैं—

एक स्त्री—अरे बाबा! मुझे तो कोई अच्छी सी जड़ी-बूटी दे दो ताकि मेरी सासू मेरे बस में हो जाए । उसके पास बड़ा माल है, बस, उसकी चाबी मुझे मिल जावे। भला मैं उसकी सेवा कब तक करूंगी ?

एक लड़का—सुनो बाबा, मुझे तो ऐसा मंत्र चाहिए कि स्कूल के सारे मास्टरजी मुझे बिना पढ़े पास कर दें और सारे स्कूल में मेरा खूब रौब जमा रहे।

दूसरा लड़का— बस तंग आ गया हूँ पिताजी से । हर वक्त दुकान पर ही बैठे रहते हैं । किसी दोस्त को अपने मन से चाय भी नहीं पिला सकता। कैसे इस पराधीनता से छूटूँ ? रे बाबा, है कोई जादू-टोना तेरे पास , जिससे पिताजी अपने आप मुझे सारी जिम्मेदारी सौंप दें। बस मैं तो सुखी हो जाऊँगा।

अहंकार— बैठो-बैठो, घबड़ाओ मत, मेरे पास तुम सबके दुःखों की दवा है। बस, दो-चार दिन में ही सबकी समस्या हल हो जायेगी। न कोई जड़ी और न बूटी, सुन लो मेरी बात अनूठी।

सभी लोग— तो जल्दी बताओ बाबा, जल्दी।

अहंकार— अरे भाई ! तुम सब मानव हो। किसी के सामने झुकना तुम्हारा अपमान है।ऐ बहू! देख, जरा घर में अकड़कर रहा कर, सबके साथ घमंड से बात किया कर फिर तो तेरी सास तेरे खूब नखरे देखेगी और अपने आप तुझे मालकिन बनाएगी। और मेरे बच्चों सुनो ! स्कूल हो या घर, जरा रौब दिखाकर , मूँछों पर ताव देते हुए घुसा करो तो स्वयं ही तुमसे सब डरेंगे । आजकल बिना गुण्डागर्दी के कोई भी नहीं डरता है।

(इतने में ही एक मृदुता नामक लड़की मंच पर आती है और इस प्रकार से सबको भड़काते देखकर कहती है।)

मृदुता—अरे बाबा ! ऐसी शिक्षाएं देकर आप हमारी समाज और देश को कहाँ ले जाना चाहते हैं ?

अहंकार—तो क्या देवी ! ये लोग अपने सिर सबके पैरों में रगड़ते फिरें। अब पुराने जमाने की बातें छोड़ दो । मानव का मस्तक उत्तमांग है, कोई नारियल थोड़े ही है जहाँ पाया वही फोड़ दिया।

मृदुता— (गीत) सुनो रे सुनो अहंकार की कहानी,

इसकी है सबसे बड़ी ये निशानी,

मान कषाय के वश में होकर किसी की एक न मानी।।

सुनो रे.....

रावण ने इस मान के कारण, सीताजी का हरण किया था
सबके समझाने पर भी नहिं, राम को उसने नमन किया था।
जिसके कारण लंका जल गई स्वयं मरा अभिमानी —
सुनो रे सुनो...।।1।।

(सभी लोग उस लड़की के आसपास खड़े होकर गीत सुनने लग जाते हैं।) **मृदुता अपना गीत गाती है—**

अहंकार को कभी न पालो, यदि अपना हित चाह रहे तुम।
तुम बदलोगे जग बदलेगा, यदि विनम्र व्यवहार करो तुम।।
सारी चीजें स्वयं मिलेंगी, विनय की यही निशानी ।।
सुनो रे.....।।2।।

मृदुता कहती है—

सुनो मेरी प्यारी बहनों और भाइयों ! अपने जीवन में कभी मान-घमंड को स्थान मत देना । खुशहाल जीवन का राज है—नम्रता, मृदुता । जहाँ छोटे लोग अपने से बड़ों की पग-पग पर विनय करते हैं वहाँ बड़े स्वयं उन्हें अपना अधिकार सौंप देते हैं। अधिकार कभी अहंकार के बल पर प्राप्त नहीं हो सकते, विनयी बनकर कर्तव्य पालन करने से अधिकार तो तुम्हारे चरणों में खेलेंगे।

अहंकार— तुम तो मेरी सारी मेहनत पर पानी फेरना चाहती हो। यह उपदेश जाकर किसी साधु सभा में देना, यहाँ तो संसार की बातें चल रही हैं जहाँ थोड़ा बहुत गर्व किए बिना काम ही नहीं चल सकता । देखो! भगवान् रामचन्द्र को भी कितना गर्व था अपने कुल और परिवार का ।

मृदुता— यही तो भूल कर रहे हो , रामचन्द्र को अपने कुल का गर्व नहीं बल्कि गौरव था। गर्व और गौरव में महान अन्तर होता है । गर्व से अपना और दूसरे का अहित होता है लेकिन गौरव से आत्मसम्मान बढ़ता है। यदि रामचन्द्र को घमण्ड ही होता तो वे पिताजी के वचनों का पालन न करके अपने बाहुबल से अयोध्या का राज्य उसी दिन प्राप्त कर लेते किन्तु वे तो पिता के वचनों की रक्षा हेतु निर्जन वन में निकल पड़े। उनके लिए आज भी पंक्तियाँ कही जाती हैं—

रघुकुल रीति सदा चली आई ।
प्राण जायं पर वचन न जाई।।

(पास में खड़ी महिला कहती है)-

महिला—तो फिर आप ही बताइए बहन ! मैं क्या उपाय करूँ जिससे मेरी सासू का धन मुझे मिल जावे।

मृदुता—यह तो बड़ा आसान है, आप इतना परेशान क्यों होती हैं ? मैं आपसे पूछती हूँ कि क्या आपने अपने पीहर में अपनी माँ की चाबी से भी इतना राग किया था ? यदि नहीं, तो ससुराल में इतनी उतावली क्यों ? पहले आप बहू के कर्त्तव्यों का पालन तो करें, सासूजी के मनोनुकूल प्रवृत्ति करें, सभी ननद, देवर, जेठ आदि के साथ विनय का व्यवहार करें। सबसे बड़ी समझदारी की बात तो यह है कि अपने पति की कमाई पर भरोसा करें। दूसरे की संपत्ति हड़पने का भाव भी मन में न आने दें इससे व्यक्ति कभी भी धनवान नहीं बन सकता। मेरी प्यारी बहना ! यदि तुम देश की एक आदर्श नारी बनना चाहती हो तो आज से ही अपने घरेलू व्यवहार को नम्रता में बदल दो। जैसे वृक्ष में फल लगते ही वह झुक जाता है न कि तन कर खड़ा हो जाता है उसी प्रकार गुणरूपी फलों से युक्त व्यक्ति सदैव झुकता है न कि घमंड करता है ।

दोनों लड़के— और बहन! हम लोगों को क्या करना चाहिए ?

मृदुता— आप तो हमारे देश के महान कर्णधार हैं। घमण्ड को स्थान देना आपके लिए कतई शोभा नहीं देता । देखो! अपने इतिहास को, महात्मा गांधी ने अपने नम्र व्यवहार से अंग्रेजों को भी झुका लिया अपने चरणों में। उन्हें आज भी प्यार से सभी राष्ट्रपिता कहते हैं।

आप लोग अपने माता-पिता एवं गुरुओं की पूरी विनय करें तो आपको थोड़ा परिश्रम करने पर भी अधिक फल मिलेगा क्योंकि संसार में माता-पिता और गुरू ही सच्चे हितैषी होते हैं वे कभी तुम्हें गलत बनने की सलाह नहीं दे सकते। कडुवी दवाई के समान अभी भले ही उनके वचन तुम्हें कटु प्रतीत होंगे किंतु जीवन को खुशहाल बनाने में वे वचन ही असली औषधि का काम करेंगे।

(अहंकार की ओर दृष्टिपात करती हुई मृदुता कहती है)

मृदुता— भाई अहंकार जी! आप मेरी बातों का बुरा मत मानना । हम तो किसी व्यक्ति से घृणा नहीं करते बल्कि उसके अवगुणों से घृणा करते हैं।यदि आप अहंकार को अपने जीवन से निकाल दें तो सभी लोग आपकी पूजा करने लग जाएँगे। किसी व्यक्ति से घृणा नहीं करते अपितु उसके अवगुणों से घृणा करते हैं।

अहंकार— मेरा अहंकार ही नाम, मेरा अहंकार ही काम,

यदि मैं इसको ही तज दूँ तो कैसे मेरा चलेगा नाम।

मेरे अहंकार गुण को छोड़कर तो मेरा अस्तित्व ही क्या रह जाएगा? तुम्हारा प्रभाव मेरे ऊपर तो पड़ नहीं सकता । हाँ,

जो मुझे पराजित कर देगा मैं उसके साथ कुछ भी अहित नहीं करूंगा लेकिन अपना व्यापार तो चलाऊँगा ही, वर्ना धन्धा चौपट हो जायेगा।

मृदुता—खैर ! तुम तुम्हारी जानो । मैं तो सारी दुनिया के लिए यही कहूंगी कि विनय के बल पर संसार की क्या मोक्ष की सम्पत्ति भी मिल जाती है अतः अहंकार से दूर रहकर विनय गुण अपनावें। एक छोटी सी पौराणिक कथा के द्वारा मैं इसका मर्म बताती हूँ — एक गुरूजी के पास दो शिष्य निमित्तशास्त्र पढ़ते थे। उनमें से एक बड़ा घमण्डी था और दूसरा विनयी था। एक बार दोनों शिष्य कहीं देशाटन को जा रहे थे। (मंच पर एक ओर दो बालकों को पगडंडी पर चलते हुए दिखाएं। पगडंडी की दोनों ओर छोटे-छोटे पेड़ हैं) –

घमंडी शिष्य—मेरा निमित्त शास्त्र कहता है कि इस रास्ते से अभी कोई हाथी निकलकर गया है ।

विनयी—भाई! मुझे तो लगता है कि इस रास्ते से कोई हथिनी निकली हो जो एक आँख से कानी है और उस हथिनी के ऊपर कोई गर्भवती रानी बैठी थी।

घमंडी शिष्य—नहीं, नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता है। मैं जो कहता हूँ वही ठीक है। देखो! साफ हाथी के पैर दिख रहे हैं।

मृदुता सुनाती है—दूसरा लड़का बेचारा चुप हो जाता है । दोनों चलते-चलते एक नगर में पहुंचते हैं। वहां मनाई जा रही खुशियां देखकर दोनों मित्र एक व्यक्ति से पूछते हैं । मंच पर किनारे एक व्यक्ति दिखावें।

दोनों मित्र—अरे भाई ! आज क्या बात है, यहां इतनी खुशियाँ क्यों मनाई जा रही हैं ?

व्यक्ति—अभी-अभी यहाँ राजमहल में रानी को पुत्र हुआ है इसीलिए खुशियाँ मनाई जा रही हैं। जाओ, जाओ, राजा आज सबको दान बांट रहे हैं, तुम्हें भी देंगे।

विनयी—क्यों भाई! क्या वह रानी अभी इसी मार्ग से हथिनी पर बैठकर गईं थीं ?

व्यक्ति—हाँ, हाँ अभी-अभी हथिनी पर बैठकर घूमती हुई इसी रास्ते से रानी साहब पधारी ही थीं कि पुत्ररत्न की प्राप्ति हो गई।

विनयी—क्या वह हथिनी कानी थी ?

व्यक्ति—हाँ ! वह तो जन्म से ही एक आंख से अन्धी है, लेकिन आपको यह कैसे पता लगा?

मृदुता कहती है —

(इतना सुनकर घमंडी शिष्य का मुंह उतर जाता है, पुनः दोनों चलते-चलते एक तालाब के पास पहुँचते हैं।वहाँ एक बुढ़िया पानी भरकर घड़ा सिर पर रखे हुए घर जा रही थी। रास्ते में दो पण्डित देखकर रुक जाती है और खड़ी-खड़ी उनसे पूछने लगती है)

(एक बुढ़िया मिट्टी का घड़ा सिर पर लिए दिखावें, उसमें थोड़ा पानी भी हो)

बुढ़िया— अरे पण्डित जी। जरा मेरे एक प्रश्न का उत्तर बता दोगे ?

दोनों मित्र— पूछो माँ जी, पूछो, क्या पूछ रही हो ?

बुढ़िया—बारह वर्ष हो गए , मेरे बेटे को विदेश गए हुए । उसका कोई समाचार नहीं है, वह वापस मेरे पास आएगा या नहीं ?

घमंडी— (तपाक से बोल पड़ा) अरी बुढ़िया! तेरा लड़का अब वापस नहीं आएगा।

मृदुता— (इतना सुनते ही बुढ़िया घबड़ा गई और उसका घड़ा गिरकर फूट गया, तब वह घमंडी बोला कि तेरा लड़का तो मर गया। लेकिन तभी विनयी शिष्य बोल पड़ा)

विनयी— घबड़ाओ मत माँ जी ! तुम्हारा बेटा मिलने ही वाला है, जाओ घर में जाकर देखो।

बुढ़िया— (रोती हुई) बेटा, तेरे मुँह में घी-शक्कर (दौड़कर घर जाती है)

मृदुता—घर जाते ही उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा, बेटा सामने खड़ा था । बारह वर्ष के बिछड़े माँ-बेटे मिल जाते हैं । बुढ़िया जल्दी वापस आकर पण्डितजी को खूब बधाइयाँ देती है । यह देखकर घमंडी शिष्य और भी उदास हो गया । दोनों वापस गुरुजी के पास आ जाते हैं । घमण्डी शिष्य गुरूजी से कहता है! —

(गुरू और दोनों शिष्य मंच पर आते हैं)

शिष्य — (झुककर प्रणाम करते हुए) नमस्कार गुरूजी!

घमण्डी— (खड़े-खड़े ही हाथ जोड़कर) नमस्कार महाराज!

गुरूजी— क्यों बच्चों। सकुशल यात्रा हो गई ?

घमण्डी— (गुस्से में) आपने हम दोनों को निमित्त शास्त्र पढ़ाने में बहुत पक्षपात किया है। आपने इसे पता नहीं क्या-क्या अलग से पढ़ा दिया और मुझे वे विषय बताए भी नहीं। इसीलिए

मेरी बातें झूठी हो गईं।

गुरूजी— मैने कभी भी उसे अलग से नहीं पढ़ाया, सब कुछ तुम दोनों को साथ ही पढ़ाया है। जरूर तुमने अपने घमण्ड में आकर कोई गलती की है। मैं सदैव तुम लोगों से यही कहा करता हूँ कि हर जगह विनय से काम लो , सोच-समझ कर उत्तर दो, लेकिन तुम तो मेरी मानते कब हो ? अच्छा बोलो क्या हुआ?

घमंडी—अपने लाड़ले शिष्य से ही पूछो कि रास्ते में हाथी के पैर स्पष्ट देखकर हथिनी का अनुमान, उसके कानी होने का और गर्भवती रानी को उस पर बैठने की सारी बातें कैसे जान गया ?

गुरूजी—(विनयी शिष्य की ओर देखते हुए) क्यों वत्स ! तुम सत्य बताओ, तुमने कैसे यह सब बताया ?

विनयी—गुरुदेव। वे पैर हाथी के पैर से छोटे थे इसलिए मैंने हथिनी का पैर बताया । दूसरी बात आपने हम सभी को बताई थी कि हथिनी पर राजघराने की रानियाँ बैठा करती हैं। एक जगह मार्ग में हथिनी के बैठने के और रानी के हाथ टेककर उतरने के चिन्ह थे अतः मैंने सोचा कि गर्भवती रानी ही हाथ टेककर उतरेगी इसीलिए मैंने ऐसा बताया । तीसरी बात हथिनी कानी कैसे बताई सो सुनिये —पगडंडी के दोनों ओर पेड़ पौधे थे उनमें से एक ओर के पेड़-पौधे खाए हुए उजड़े मालूम पड़ते थे दूसरी ओर के बिलकुल ठीक थे इसीलिए मैंने अनुमान लगाया कि हथिनी कानी अवश्य होगी अन्यथा दोनों ओर के पौधे खाती।

गुरूजी—(घमंडी की ओर देखकर) सुनी तुमने इसकी बातें! मैंने सारी बातें दोनों को साथ ही बताई थी न ! अच्छा सुनाओ, दूसरी क्या घटना है ?

घमंडी— गुरूजी ! मैंने बुढ़िया के प्रश्न के समय उसका चेहरा उदास देखकर बताया कि तेरा बेटा नहीं आएगा, फिर घड़ा फूटा देखकर बताया कि बेटा मर गया है । यही तो आपने बताया था लेकिन मेरी बात झूठी निकल गई।

गुरूजी— (विनयी की ओर देखकर) तुमने क्या बताया ?

विनय— गुरुदेव । यद्यपि निमित्त तो कुछ ऐसा ही बता रहा था किन्तु बुढ़िया के सिर से घड़ा गिरकर फूटते ही पानी उसी नदी में मिल गया अतः इस मिलन को देखकर मैंने बताया कि लड़का आ चुका है । आपने यही तो बताया था, मुझे लगता है कि ये भाईसाहब पाठ भूल गए हैं और जल्दी में इन्होंने ऐसा उत्तर दे दिया।

(घमंडी शिष्य शर्मिन्दा सा मुँह लटकाए खड़ा है, गुरूजी उसे संबोधित करते हुए कहते हैं)

गुरूजी—देखो बेटा! यदि घमण्ड से तुम पढ़ोगे तो कभी भी पूर्ण ज्ञान अर्जित नहीं कर सकते । गुरू की विनय, शास्त्र की विनय, सहपाठियों की विनय से ज्ञान सदैव बढ़ता है। तुम्हें उसका फल भी मिल चुका है अतः अपने इसी मित्र की भाँति विनयी बनोगे तो समस्त शास्त्रों में पारंगत हो जाओगे। गुरू की समस्त विद्याएँ तुम्हें प्राप्त करने में देर नहीं लगेगी।

(मंच पर खड़े अहंकार तथा अन्य समस्त स्त्री-पुरूषों से मृदुता कहती है)—

मृदुता— देखा तुमने अहंकार का फल। इसके कारण प्राप्त हुई विद्याएँ भी पलायमान हो जाती हैं। अब आप लोग स्वयं निर्णय करें कि आपको मान अच्छा लगता है या मार्दव ?

सभी एक साथ—हम तो मार्दव धर्म को ही स्वीकार करेंगे। (गीत गाते हैं)—

-शेर छंद-

मार्दव धरम हम सबको विनयभाव सिखाता ।
मत मान औ घमण्ड करो पाठ पढ़ाता।।
तुम मान वश में किसी भी पर को न सताना।
अमृत न दे सको तो कभी विष न पिलाना।।1।।

यदि प्यार से बोलोगे सभी मित्र बनेंगे।
मानी पुरुष के जग में सभी शत्रु बनेंगे।।
रहता न अहंकार चक्रवर्तियों का भी ।
हम क्षुद्र प्राणियों की क्या गणना हुआ करती।।2।।

परिवार में भी नम्रता से शांति बनेगी।
मृदुता से ही समाज में शुभ क्रान्ति बढ़ेगी।
भारत के सपूतों ! यदी तुम नम्र बनोगे।
श्री राम सदृश देश के सरताज बनोगे।।3।।

उत्तम धरम मार्दव को मुनीश्वर ही पालते ।
निज आत्म में रमण करें सब मद को टाल के।।
हम तुम भी एकदेश रूप धर्म को करें ।
तब ''चन्दनामती'' सभी गुण स्वयं को वरें।।4।।

''बोलिए उत्तम मार्दव धर्म की जय''

(३) उत्तम आर्जव धर्म-मोनो एक्टिंग

लेखिका-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

सूर्पणखा नाम की एक स्त्री रोती हुई मंच पर प्रवेश करती है और सामने राम-लक्ष्मण को देखकर उनके रूप पर मोहित होकर कहती है —

ओहो ! ये तो कोई देवपुरुष अथवा कामदेव दिख रहे हैं। इन्हें देखकर मैं तो धन्य हो गई। अब तो अपने ऊपर इन्हें मोहित करने हेतु कुछ मायाजाल बिछाना पड़ेगा।

स्त्री— लगता है सीधी उंगली से घी निकलने वाला नहीं, टेढी उंगली से ही निकालना पड़ेगा।

(रोती है.....) गाती है—

चाल चली भई चाल चली, मैंने कैसी चाल चली ।
कभी रामजी निहारें, कभी लक्ष्मण प्यारे,
सीता सी सती वनवास चली।
चाल चली भई चाल चली.....

आवाज सुनकर सीता आगे आती है और एक कन्या को बैठी देखकर कहती है—

सीता—कन्ये! तुम इस घनघोर जंगल में क्यों बैठी रो रही हो ? क्या नाम है तुम्हारा ? कहाँ से आई हो ?

सूर्पणखा को सीता अपने साथ में राम के समीप ले जाती है। वहाँ सूर्पणखा आकर पहले लक्ष्मण से कहती है—

सूर्पणखा—हे रूपसुन्दर ! मैं यहाँ अनाथ हूँ । मेरा यहाँ कोई भी नहीं है । मेरी माता मुझे छोड़कर स्वर्ग सिधार गई है । अब तो तुम्हीं मेरे नाथ हो, मुझे स्वीकार करो, मुझ कन्या पर दया करो।

लक्ष्मण—सुन्दरी! मैं तुम्हें स्वीकार नहीं कर सकता । तुम तो मेरी बहन के समान हो । ऐसी बात मुझसे मत करो। वैसे भी आजकल तो मैं अपने भाई-भाभी के साथ वनवास में चल रहा हूँ अतः स्त्री को साथ रखने का कोई औचित्य भी नहीं है।

सूर्पणखा— नाथ! मैंने तो आपको अपना पति मान लिया है । अब आप चाहे ठुकराओ या स्वीकार करो।

लक्ष्मण मौनपूर्वक बैठे हैं अतः वह राम से कहने लगती है—

हे राम ! तुम्हीं मुझे अपनी पत्नी बना लो। अब मैं कहाँ जाऊँ ? यदि इस जंगल में कोई शेर या अजगर आकर मुझे खा लेगा तब तुम्हें भी तो पाप लगेगा। जैसे तुम्हारे साथ यह (सीता) स्त्री है वैसे ही मैं भी रह लूँगी।

उसकी अश्लील बातें सुनकर सभी मौन हो जाते हैं—

सूर्पणखा पुनः जोर-जोर से रोने लगती है और कहती है —

अरे माँ ! तुम मुझे छोड़कर कहाँ चली गईं ? ओह ! अब मैं कहाँ जाऊँ ? नहीं-नहीं..... मुझे तो अब ये राजकुमार मिल गए हैं, मैं इन्हीं के साथ जंगल में भी स्वर्ग सुखों का अनुभव करूँगी। पुनःकुछ दूर जाकर जोर से हँसती है—

हः हः हः । मेरा जादू चल गया (गाती है .....)

चाल चली भई चाल चली .....

राम— पुत्री ! हम दोनों भाई तुम्हें स्वीकार करने में असमर्थ हैं। तुम अपने पिता का नाम बता दो । हम तुम्हें वहीं पहुँचा देगें। बेटी! तुम्हें दुखी होने की कोई आवश्यकता नहीं है।

सूर्पणखा बार-बार लक्ष्मण के पास जाकर प्रेमालाप करती है—

सूर्पणखा— हे देव! आपके सामने अब मेरे लिए राजसुख भी बेकार जान पड़ रहा है। मैं आपके बिना एक क्षण भी नहीं रह सकती । सुनो! मेरे साथ कुछ दिन रहकर तो देखो, तुम्हें बड़ा आनन्द आएगा।

लक्ष्मण— (गुस्से में) जाती है यहाँ से या नहीं ? तू तो कोई कुल्टा स्त्री जान पड़ती है। धिक्कार है तेरी माया को! सुना तो बहुत है तिरिया चरित्रं पुरुषत्य भाग्यं। लेकिन आज तुझमें माया की साकार मूर्ति दिख रही है। शर्म नहीं आती तुझे परपुरुष से ऐसा प्रेमालाप करते हुए ?

सूर्पणखा— (क्रोधित होकर) ओह! तुमने तो मेरी नाक ही काट दी। ध्यान रखना, मैं तुम लोगों को इस अपमान का बदला अवश्य चखाऊँगी।

पुनः सूर्पणखा चली जाती है (गाती हुई)—

नहीं चली भई, नहीं चली, मेरी माया नहीं चली ।

नहिं राम मुझे चाहें, नहिं लखन भि चाहे, इनसे नहिं मेरी दाल गली।

नहीं चली भई नहीं चली मेरी माया नहीं चली।

सभा को सम्बोधन—

महानुभावों एवं मेरी बहनों !

सूर्पणखा मायाचारी के द्वारा राम लक्ष्मण को अपना पति बनाना चाहती थी। वह रावण की बहन और खरदूषण की पत्नी थी किन्तु राम लक्ष्मण के रूप पर मोहित होकर अपनी विद्या से कन्या का रूप धारण कर मायाजाल रचा था इसीलिए उसे लक्ष्मण द्वारा अपमानित होना पड़ा। आज भी संसार में यह प्रचलित है कि लक्ष्मण ने सूर्पणखा की नाक काटी थी सो उसका अपमान ही नाक काटना था । महापुरुष किसी स्त्री की शस्त्र द्वारा नाक नहीं काटते हैं उसे तो अपनी मायाचारी तथा चरित्रहीनता का फल मिला था अतः मेरा तो आपसे यही कहना है कि मायाचारी कभी भी नहीं करनी चाहिए।

Lecture for International Summer School for Jain Studies
(2nd July 2016, Mangitungi-Nasik, MH.)

THE ESSENCE OF JAIN RELIGION

-Ganini Gyanmati Mataji

The *Karma-Siddhant* or the theory of the Karma is the fundamental theory in Jain philosophy. The great souls, who became or will become Teerthankars were once worldly souls like all of us. They followed the principle of Non-Violence i.e. Ahimsa in their lives and by making efforts gradually they became **'GODS'.** When we talk of the previous births of the first Teerthankar-Bhagwan Rishabhdev, we come to know that–

Ten births before becoming Bhagwan Rishabhdev, he was the King Mahabal, who practiced Jain Religion and breathed his last with the remembrance of the name of Teerthankar Bhagwants. This method of death is called *Sallekhna* or *Samadhi Maran*. Due to the adoption of this method of leaving body, he became a deity in the heaven. He made sincers efforts in right direction in coming births also along with enjoying the luxuries & comforts of humanbeings and deities. Ultimately he became God i.e. Bhagwan Rishabhdev.

There are four destinities (*Gatis*)-
Hellish beings (*Narak Gati*)
Sub-human beings (*Tiryanch Gati*)
Humanbeings (*Manushya Gati*)
& Celestial beings (*Dev Gati*)

Out of these four, there are only sufferings in the life of hellish-beings.

Sub-human beings i.e. animals-birds-insects-plants-trees ets. have some pleasures but maximally sufferings in their lives. Humanbeings have both enjoyment & sufferings, while celestial-beings or deities have only pleasures & comforts, however they have the sorrow of death.

Each creature either a humanbeing or a deity obtains pleasures or sufferings according to own *karma-bandhan* based on own good or bad deeds. According to Jain-Philosophy, no God renders pleasure or pain but the living entity attains these according to own activities.

By the devotion of Teerthankar Bhagwants and following their teachings i.e. avoiding– violence, telling lie, stealing, adultery, non-vegetarianism, taking wine etc., person earns sacred karmas i.e. *Punya* and become a deity or humanbeing in the next birth.

Contrary to it, by doing violence, telling lie to deceive others, taking non-vegetarian diet etc. one earns sinful *Karmas* and due to that he/she has to take birth in hells or animals-birds-insects etc. where he/she has to undergo a lot of pain & sufferings.

So, by the studies of Jain-Religion and the darshan of 108 ft high Bhagwan Rishabhdev at Mangitungi, elevate your life in spiritual sense. You can also make your soul as 'God' in coming births, if you practice this theory of *Karma-Siddhant.*

All of you have become a humanbeing, so make this birth fruitful in real sense, it is my sincere inspiration & blessing for all of you.

(Translated Version by– Aryika Swarnmati-Sanghasth)

Lecture for International Summer School for Jain Studies
(2nd July 2016, Mangitungi-Nasik, MH.)

JAINISM & STATUE OF AHIMSA

Presented by – Pragyashramni Aryika Chandnamati

Honourable Gentlemen!

Today you have come to a Pious Land named as Mangitungi Siddha Kshetra. Siddha Kshetra means the place from where greatmen have attained Moksha. It is said in Jain Literature that 99 crore Muniraj became salvated from here; so it is considered to be a very sacred & adorable pilgrimage centre of Jains.

Before explaining the present wonder of this land, I want to elaborate some important points of Jain Religion –

(1) The fundamental Mantra of Jain Dharma is **Ṇamokar Mahamantra**, which is known as the *Matrika Mantra*. It means that this Mantra protects all the living-beings like a mother, when they remember and recite it. As you have come to Indian land for Jain-studies, all of you should know the exact pronunciation of this Mahamantra.

So you recite after me-

ṆAMO ARIHANTANAM
ṆAMO SIDDHANAM
ṆAMO AYERIYANAM
ṆAMO UVAJJHAYANAM
ṆAMO LOE SAVVASAHUNAM

This Mahamantra can be recited by any humanbeing of the world irrespective of the caste-religion-gender etc. It protects the person in all adverse conditions and is the root cause of earning sacred karmas i.e. *Punya*.

(2) The two supreme eternal Teerths i.e. Pilgrimage centers of Jain Religion are **Ayodhya & Sammed Shikharji**.

Ayodhya is the eternal birthland and Sammed Shikharji is the eternal salvation land of Teerthankar Bhagwants. Presently Ayodhya is in Uttar Pradesh, while shikharji is present in Jharkhand state of India. Pilgrimage to these two Teerths is considered to be essential and very fruitful in Jain Society as one gets spiritual & material bliss by paying homage to these pious lands.

It has been truely said that "As food is necessary for the body, Prayer is necessary for the soul."

(3) **24 Teerthankars** are the vital energy of this Religion. This tradition of 24 Teerthankars is continuous from the infinite past and will go upto the infinite future. In the present age, **Bhagwan Rishabhdev became the 1st Teerthankar, while Bhagwan Mahaveer became the last i.e. the 24th Teerthankar.** Teerthankars propound the path of true religion for all the worldly creatures.

(4) **Non-Violence i.e. Ahimsa** is the main principle propounded by all the Teerthankars.

Infact, Non-violence or Ahimsa is the foundation of the grand palace of Jainism. Mutual friendly co-existence where we do-not harm or least harm the interests of the others around us in any sense is Non-violence. It is the concept of a true life.

As a matter of fact, Ahimsa is the not only the Jain religion but it is the

World-Religion.

(5) Today you should feel proud because you have come to such a place, where all these concepts of Jainism are being realized in the form of **STATUE OF AHIMSA** i.e. 108 ft. high single-stone standing Idol of the 1st Teerthankar Bhagwan Rishabhdev.

I always say that as America is famous by 'Statue of Liberty', Paris is famous by 'Eiffel Tower', India will be famous by "Statue of Ahimsa".

Upto now, people of the world used to come to India to see Taj Mahal, which is the symbol of the wordly love between Shahjahan and his wife Mumtaj, but now world-tourists have to come to Mangitungi of India to have the darshan of the 'Statue of Ahimsa', which is the personification of the *Veetrag Mudra*. Google-search, You-Tube & Guinness World Records all are presenting this Idol as the Highest or Tallest Jain Idol of the world. Lacs of people are getting the message of Non-violence, Humanity, Mutual friendly co-existence and spiritual life by the Darshan of this Idol. **This Idol tells us that Peace resides in Tyag i.e. Renunciation and not in experiencing sensual pleasures.**

It is revealing the extreme of the Meditation & Yoga. Who-ever understood this eternal truth, they became immersed into the Meditation of their soul and ultimately attained *Moksha* or liberation from the worldly-transmigration.

Infact, the name **"BHARAT"** is having the same hidden meaning. **'BHA'** means *Prakash* or light of the soul and **'RAT'** means 'To be immersed into that'. It means that those, who remain immersed into their soul, are the inhabitants of 'Bharat'. This is the reason why India or Bharat is supposed to be the Spiritual Guru of the world.

(6) Although the present humanbeings are not having the strong-most body-configuration essential for the true Meditation of the soul leading to Moksha, however Jain Scriptures tells about the Meditation process for the people of the present age causing peace, at least for sometime. I want to make all of you to do this Meditation for a while, so we start now—

Shortest Meditation of OHM Mantra

For sometime you sit in lotus posture and concentrate on a Mantra. I will tell you today, how to do meditation. Please give attention and keep your one palm on another palm.

The right palm should be upside. Now close your eyes and keep your body fully straight.

Firstly you imagine a white big background in front of you. On this background you see the Mantra Ohm. This Mantra has been originated from the Namokar Mantra. Ohm is the smallest form of the Namokar mantra. This is the original mantra and you can not convert it into English or in other language. Now you concentrate on saffron coloured Om written on the white background.

Although the external eyes are closed, yet the internal journey is going on. You have not to take sleep and have to stop your mind from going outside.

You concentrate your mind only on Ohm mantra. Don't think anything else and try again try to see the Ohm.

In second phase of this meditation, you see the Sun before you and assume that this Sun is having the image of Ohm at its centre. Imagine that the rays are coming out from this Sun. At this time, you feel very much happi-

ness and peace.

Now, you will complete your short meditation. Before it, check/purify your breathing system. You should recite 5 *Padas* of Namokar Mantra one by one.

Telling "Namo Arihantanam" you take a long breath and with "Namo Siddhanam" you exhale your breathing. After this you tell internally "Namo Aayariyanam" take long breathing and by "Namo Uvajjhayanam" you leave the breath slowly. Like this with "Namo Loye" you take a long breath inside and telling "Savva Saahoonam" you leave your breath gently. Through this method you have completed three breathing cycles with inhalation and exhalation. When you practice this method of Meditation again & again, you will be perfect in it.

In the end, I want to tell you one important message of life—

"Count your garden by the flowers
Never by the leaves that fall,
Count your days by golden hours,
Don't remember clouds at all."

Bhajan Of Meditation

-Aryika Chandnamati

Music-Kabhi Ram Banke.....

When open the eyes, Om Mantra recite,
Supreme Mantra is for all of us.

The power of Panch Parmeshthis,
is observed in Om Mantra.
Say nine times or hundred times,
Supreme Mantra is for all of us. (1)

This is short form of Namokar Mantra,
This is meditated by great persons.
We will also meditate, then will get supreme gate*,
Supreme Mantra is for all of us. (2)

This Mantra gives us happiness,
and gives enjoyment of Soul.
Says "Chandnamati", wants Siddhagati,
Supreme Mantra is for all of us. (3)

* Moksha

ऋषभगिरि, मांगीतुंगी (नासिक) महा. में चातुर्मास में 26 पिच्छीधारी साधु-साध्वियाँ साधनारत

आर्यिका श्री चंदनामती माताजी

आर्यिका श्री अभेदमती माताजी

आर्यिका श्री सुआद्यमती माताजी

आर्यिका श्री सुव्रतमती माताजी

आर्यिका श्री सुदृढ़मती माताजी

आर्यिका श्री सुज्ञानश्री माताजी

आर्यिका श्री स्वर्णमती माताजी

आर्यिका श्री विनीव्रता माताजी

आर्यिका श्री प्रशस्तमती माताजी

ऋषभगिरि, मांगीतुंगी (नासिक) महा. में चातुर्मास में 26 पिच्छीधारी साधु-साध्वियाँ साधनारत

आर्यिका श्री मुदितमती माताजी

आर्यिका श्री भक्तिमती माताजी

आर्यिका श्री प्रार्थनामती माताजी

क्षुल्लक श्री प्रशांतसागर जी महाराज

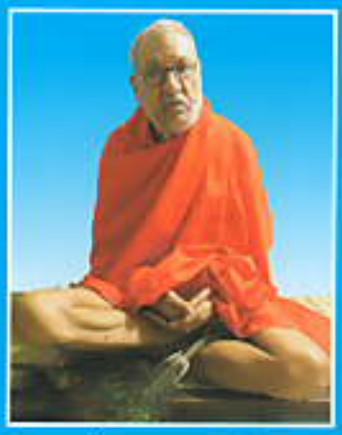

क्षुल्लक श्री उत्सवसागर जी महाराज

क्षुल्लिका श्री पुण्यमती माताजी

क्षुल्लिका श्री सुकल्पाणमती माताजी

क्षुल्लिका श्री सत्यश्री माताजी

पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी, जम्बूद्वीप व मांगीतुंगी

स्वत्वाधिकारी दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र. के लिए
श्री कैलाशचंद जैन, करोलबाग-नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित तथा प्रेमी प्रिंटिंग प्रेस, मेरठ द्वारा मुद्रित
आवरण एवं रंगीन पृष्ठ विजय जैन, पारस प्रिन्टर्स, दरियागंज-नई दिल्ली द्वारा मुद्रित। फोन (011) 23289976, 23244060